दिसम्बर 2018

दादावाणी

Retail Price ₹ 15

सारी भूलें मिटाने के लिए ज्ञानी या तो
महात्माओं की सेवा रूपी यज्ञ करना पड़ेगा
या स्व-पुरुषार्थ करना पड़ेगा।

वर्ष : 14 अंक : 2
अखंड क्रमांक : 158
दिसम्बर 2018
Total 32 pages (including cover)

Editor : Dimple Mehta
© 2018
Dada Bhagwan Foundation.
All Rights Reserved
Printed & Published by
Dimple Mehta on behalf of
Mahavideh Foundation
Simandhar City, Adalaj
Dist-Gandhinagar - 382421

Owned by
Mahavideh Foundation
Simandhar City, Adalaj
Dist-Gandhinagar - 382421

Printed at
Amba Offset
B-99, GIDC, Sector-25,
Gandhinagar – 382025.

Published at
Mahavideh Foundation
Simandhar City, Adalaj
Dist-Gandhinagar - 382421

संपर्क सूत्र :
त्रिमंदिर, सीमंधरसिटी,
अहमदावाद-कलोल हाइ-वे,
पो.ओ.: **अडालज**,
जि.: गांधीनगर-382421.
फोन: (079) 39830100
email: dadavani@dadabhagwan.org
www.dadabhagwan.org
दादावाणी संबंधी शिकायत के लिए:
8155007500

सबस्क्रिप्शन (सदस्यता शुल्क)

15 साल
भारत : 1500 रुपये
यू.एस.ए. : 150 डॉलर
यू.के. : 120 पाउन्ड

वार्षिक
भारत : 150 रुपये
यू.एस.ए. : 15 डॉलर
यू.के. : 12 पाउन्ड

भारत में D.D./M.O. 'महाविदेह फाउन्डेशन' के नाम से संपर्कसूत्र के पते पर भेजें।

दादावाणी

सेवा से होता है ज्ञान प्रैक्टिकल

संपादकीय

परम पूज्य दादा भगवान (दादाश्री) ने अपनी पूरी ज़िंदगी में एक ही ध्येय रखा था कि, 'जो मुझसे मिला, उसे सुख होना ही चाहिए।' अपने सुख के लिए कभी सोचा ही नहीं, बल्कि निरंतर उसी भावना में रहे कि सामने वाले की क्या परेशानी है और वह कैसे दूर हो तभी उनमें कारुण्यता प्रकट हुई और उसके साथ ही अद्‌भुत अध्यात्म विज्ञान भी प्रकट हो गया।

अध्यात्म में प्रगति करने के लिए दादाश्री के जगत् कल्याण के मिशन में 'सेवा रूपी यज्ञ' एक बहुत बड़ा निमित्त है। पूर्णता प्राप्त करने के दो रास्ते हैं। एक तो, जुदापन की जागृति बढ़ाने का पुरुषार्थ रूपी यज्ञ करना और दूसरा महात्माओं की सेवा करेंगे तो अपना ज्ञान प्रैक्टिकल होगा और पूर्णता प्राप्त होगी।

कषाय वाली प्रकृति में से अकषाय की तरफ कैसे जाएँ? राग, मोह, विषय में से निर्मोही कैसे बन सकेंगे? दादा कहते हैं कि जब सेवा में मन-वचन और काया का उपयोग होगा, परायों के लिए देह का उपयोग होगा, खुद का मोह खत्म होगा, तब यह प्रकृति खपेगी। जब तक तन-मन-धन से ज्ञानी की सेवा नहीं करेंगे तब तक यह ज्ञान परिणामित नहीं होगा। पूज्य नीरूमाँ और पूज्य श्री दीपकभाई ने भी ज्ञान के साथ-साथ दादा की सेवा में फना होकर ज्ञानी का *राजीपा* प्राप्त किया था।

2018 की साल दादाजी की 111वीं जन्म जयंती का वर्ष है और इसके साथ ही गुरुपूर्णिमा में पूज्य श्री की तरफ से 'कषाय रहित सेवा' का संदेश भी मिला है उस अनुसार हम सभी जगत् कल्याण के प्रोजेक्ट में सेवा देंगे। यदि दादा (के प्रोजेक्ट) में सेवा न देते हों तो घर में या ऑफिस में सेवा का व्यवहार आता ही रहता है। पूर्व में किए गए राग-द्वेष और मोह के फलस्वरूप यह व्यवहार आता है, इस फल को भुगत लेना है और नए कषाय उत्पन्न न हो, ऐसी जागृति में रहकर व्यवहार पूरा करना है। दादा के काम में तो क्रोध-मान-माया-लोभ को फना करके सेवा देनी है। यह सेवा कषायों को खत्म करने के लिए ही है। जब टकराव होता है तब मान आहत होता है, जब मनमानी नहीं होती तो टकराव होता है, आक्षेप भी मिलते हैं। सेवा में कितने सारे एडजस्टमेन्ट लेने पड़ते हैं, प्रतिकूलता में अहंकार खत्म होगा, वर्ना अनुभव कैसे होगा?

सेवा करते हुए जितने एडजस्टमेन्ट लेते जाएँगे, उतने ही कषाय खत्म होते जाएँगे। जैसे-जैसे कषायों को ज्ञान से खाली करते जाएँगे, वैसे-वैसे ज्ञान प्रैक्टिकल होता जाएगा। हम निश्चय करते हैं कि इस साल कषाय रहित सेवा देंगे। प्राप्त हुई सेवा में अहंकार टकराएगा, चकनाचूर हो जाएगा लेकिन हमें अलग नहीं होना है। दादाई जगकल्याण के यज्ञ में आने वाले हर एक व्यक्ति को सर्वोत्तम परिणाम प्राप्त हो, इसी तरह से सभी महात्माओं के मन-वचन-काया सेवा में कार्य करते हुए और आज्ञा में रहकर प्रगति करें, यही अभ्यर्थना।

जय सच्चिदानंद

पाठकों से...

'दादावाणी' सामायिक में मुद्रित पाठ्य सामग्री मूलत: गुजराती 'दादावाणी' का हिन्दी रूपांतर है। कोष्ठक में दिए गए शब्द या तो अंग्रेज़ी शब्द का अर्थ हैं अथवा शब्द का तात्पर्य स्पष्ट करने हेतु वृद्धित किए गए वाक्यांश है। यहाँ पर 'आत्मा' शब्द को गुजराती और संस्कृत की तरह पुल्लिंग में प्रयोग किया गया है। जहाँ पर भी 'चंदूभाई' नाम का प्रयोग हुआ है, वहाँ पर पाठक खुद को समझें। 'दादावाणी' के इस अंक में अगर आप कोई बात न समझ पाएँ तो प्रत्यक्ष सत्संग में पधारकर समाधान प्राप्त करें। अनुवाद में कोई कमी नज़र आए तो हमें सूचित करने की कृपा करें, ताकि भविष्य में सुधार किया जा सकें । ऐसी क्षतियों के लिए हम आपके क्षमाप्रार्थी है।

सेवा से होता है ज्ञान प्रैक्टिकल

जीवन सरल बनाने के लिए ओब्लाइजिंग नेचर

प्रश्नकर्ता : जीवन सात्विक और सरल बनाने के क्या उपाय है?

दादाश्री : ओब्लाइजिंग नेचर रखकर तेरे पास जितना हो उतना, लोगों को देता रह। इसी तरह जीवन सात्विक होता जाएगा। ओब्लाइजिंग नेचर रखा है तूने? तुझे ओब्लाइजिंग नेचर अच्छा लगता है?

प्रश्नकर्ता : कुछ अंश तक रखा है!

दादाश्री : उसे अधिक अंश में करें तो अधिक फायदा होगा। लोगों को ओब्लाइज ही करते रहना। किसी के लिए धक्के खाकर, चक्कर लगाकर, पैसे देकर, किसी दु:खी को दो कपड़े सिलवाकर दें, ऐसे ओब्लाइज करना।

भगवान कहते हैं कि, 'मन-वचन-काया और आत्मा (प्रतिष्ठित आत्मा) का उपयोग औरों के लिए करना। फिर तुझे कोई भी दु:ख आए तो मुझे बताना।'

धर्म की शुरुआत ही 'ओब्लाइजिंग नेचर' से होती है। आप अपना कुछ औरों को देते हो तो वहीं पर आनंद है। जबकि लोग लेना सीखते हैं! आप अपने लिए कुछ भी मत करना। लोगों के लिए ही करना, तो आपको अपने लिए कुछ भी नहीं करना पड़ेगा।

औरों के लिए कुछ करने का भाव

क्या कोई पेड़ अपने फल खुद खाता है? नहीं! अत: ये पेड़ मनुष्य को उपदेश देते हैं कि, 'आप अपने फल दूसरों को दे दो। आपको कुदरत देगी।' नीम कड़वा ज़रूर लगता है, फिर भी लोग उगाते हैं क्योंकि उसके दूसरे लाभ हैं, वर्ना पौधा उखाड़ ही डालते। पर वह दूसरी तरह से लाभकारी है। वह ठंडक देता है, उसकी दवाई हितकारी है, उसका रस हितकारी है। सत्युग में लोग सामने वाले को सुख पहुँचाने का ही प्रयोग करते थे। पूरे दिन 'किसे ओब्लाइज (सहाय) करूँ' ऐसे ही विचार आते थे।

बाहर से कम हो तो हर्ज नहीं लेकिन अपना अंदर का भाव तो होना ही चाहिए कि, 'अगर मेरे पास पैसे हों तो मुझे किसी का दु:ख कम करना है। अक़्ल हो तो मुझे अक़्ल से किसी को समझाकर उसका दु:ख कम करना है।' खुद के पास जो पूंजी हो उससे हेल्प करनी है, वर्ना ओब्लाइजिंग नेचर तो रखना ही है। ओब्लाइजिंग नेचर यानी क्या? दूसरों के लिए कुछ करने का स्वभाव!

ओब्लाइजिंग नेचर हो, तो कितना अच्छा स्वभाव रहता है! पैसे देना ही ओब्लाइजिंग नेचर नहीं है। पैसे तो हमारे पास हों या न भी हों लेकिन हमारी इच्छा, भावना ऐसी होनी चाहिए कि इसे किस प्रकार हेल्प करूँ! हमारे घर कोई

आए तो, ऐसी भावना रहनी चाहिए कि उसकी कैसे कुछ मदद करूँ। पैसे देने या नहीं देने, वह आपकी शक्ति के अनुसार है।

ऐसा कुछ नहीं है कि पैसों से ही 'ओब्लाइज' रखा जाए, वह तो देने वाले की शक्ति पर निर्भर करता है। मन में सिर्फ भाव रखना है कि किस तरह 'ओब्लाइज' करूँ? इतना ही देखना है कि ऐसा रहा करे।

परोपकार से, पुण्य साथ में

जब तक मोक्ष प्राप्त नहीं हो, तब तक सिर्फ पुण्य ही मित्र समान काम करता है और पाप दुश्मन समान काम करता है। अब आपको दुश्मन रखना है या मित्र, आपको जो अच्छा लगे, उस अनुसार निश्चित करना है। मित्र का संयोग कैसे मिले, वह पूछ लेना और दुश्मन का संयोग कैसे जाए, वह भी पूछ लेना। यदि दुश्मन पसंद हो तो उसका संयोग कैसे मिले, यह पूछे, तो हम उसे कहेंगे कि, 'जितना चाहो उतना उधार करके घी पीना, चाहे जहाँ भटकना, और जैसा तुझे ठीक लगे वैसे मज़े उड़ाना, फिर आगे जो होगा देखा जाएगा!' अगर पुण्य रूपी मित्र चाहिए तो हम बता दें कि, 'भाई इस पेड़ से सीख ले।' कोई वृक्ष क्या खुद अपना फल खाता है? कोई गुलाब क्या अपना फूल खा जाता होगा? थोड़ा सा तो खाता होगा, नहीं? हम नहीं हों, तब रात को खा जाता होगा, नहीं? नहीं खाता?

प्रश्नकर्ता : नहीं खाता।

दादाश्री : ये पेड़-पौधे तो मनुष्यों को फल देने के लिए मनुष्यों की सेवा में हैं। अब, पेड़ों को क्या मिलता है? उनकी ऊर्ध्वगति होती है और उनकी हेल्प लेकर मनुष्य आगे बढ़ते हैं! मानो कि हमने आम खाया, उसमें आम के पेड़ का क्या गया? और हमें क्या मिला? हमने आम खाया इसलिए हमें आनंद हुआ। उससे हमारी वृत्तियाँ जो बदलीं, उससे हम अध्यात्म में सौ रुपये जितना कमाते हैं। अब, आम खाया इसलिए आपके हिस्से में से पाँच प्रतिशत आम के पेड़ को जाता है और पचानवे प्रतिशत आपके हिस्से में रहता है। वे हमारे हिस्से में से पाँच प्रतिशत ले लेते हैं और वे बेचारे उच्च गति में जाते हैं और हमारी अधोगति नहीं होती, हम भी आगे बढ़ते हैं। अर्थात् ये पेड़ कहते हैं कि हमारा सबकुछ भोगो, हर एक प्रकार के फल-फूल भोगो।

परोपकार के परिणाम स्वरूप लाभ ही

यह लाइफ यदि परोपकार में बीतेगी तो आपको कोई भी कमी नहीं रहेगी। आपको किसी तरह की अड़चन नहीं आएगी। आपकी जो-भी इच्छाएँ हैं, वे सभी पूरी होंगी और ऐसे उछल-कूद करोगे तो एक भी इच्छा पूरी नहीं होगी क्योंकि वह तरीका, आपको नींद ही नहीं आने देगा। इन सेठों को तो नींद ही नहीं आती है, तीन-तीन, चार-चार दिनों तक सो ही नहीं पाते क्योंकि जिस-तिस की लूटपाट ही की है।

इसलिए ओब्लाइजिंग नेचर रखें और जाते हुए रास्ते में यदि पड़ोस में किसी से पूछते हुए जाएँ कि, 'भाई, मैं पोस्ट ऑफिस जा रहा हूँ। आपको कोई खत पोस्ट करना है?' ऐसे पूछते-पूछते जाने में क्या हर्ज है? अगर कोई कहे कि, 'मुझे तुझ पर विश्वास नहीं है।' तब कहना, 'भाई, पैर पड़ता हूँ' लेकिन जिन्हें विश्वास है, उनका तो ले जाएँ।

यह तो मैं जो मेरा बचपन का गुण था, वह बता रहा हूँ, ओब्लाइजिंग नेचर! पच्चीस साल की उम्र में मेरा पूरा फ्रेन्ड सर्कल मुझे सुपर ह्यूमन कहता था।

ह्यूमन कौन कहलाता है कि जो लेन-देन,

समान भाव से व्यवहार करे। जिसने सुख दिया हो, उसे सुख दे। दुःख दिया हो, उसे दुःख न दे। जो इस तरह का सब व्यवहार करे, वह मनुष्यपन कहलाता है।

जो सामने वाले का सुख ले लेता है, वह पशुगति में जाता है। जो खुद सुख देता है और सुख लेता है, ऐसा मानवीय व्यवहार करता है, वह मनुष्य में रहता है और जो खुद का सुख औरों को भोगने के लिए दे देता है, वह देवगति में जाता है, सुपर ह्युमन। खुद का सुख दूसरों को दे दे, किसी दुःखी को, वह देवगति में जाता है।

मनुष्य जीवन का अर्क

प्रश्नकर्ता : परोपकार के साथ 'इगोइज़म' की संगति होती है क्या?

दादाश्री : जो परोपकार करता है, उसका 'इगोइज़म' हमेशा नॉर्मल ही रहता है। उसका 'इगोइज़म' वास्तविक होता है और जो कोर्ट में डेढ़ सौ रुपये फीस लेकर दूसरों का काम करते हैं, उनका 'इगोइज़म' बहुत बढ़ा हुआ होता है।

इस संसार का कुदरती नियम क्या है कि अगर आप अपने फल औरों को दोगे तो कुदरत आपका चला लेगी। यही गुह्य साइन्स है! यह परोक्ष धर्म है। बाद में प्रत्यक्ष धर्म आता है, आत्मधर्म अंत में आता है। मनुष्य जीवन का हिसाब इतना ही है! अर्क इतना ही है कि मन-वचन-काया का उपयोग औरों के लिए करो।

निरंतर 'सेवाभाव', वही हेतु

हर एक काम का एक हेतु होता है कि यह काम किस हेतु से किया जा रहा है। उसमें यदि उच्च हेतु तय किया जाए, यानी क्या कि अस्पताल बनाना है तो उसमें पेशेन्टस (मरीज़) किस तरह से स्वस्थ हों, वे कैसे सुखी हों, वे लोग कैसे आनंद में रहें, उनकी जीवन शक्ति कैसे बढ़े, अपना ऐसा उच्च हेतु तय किया हो और सेवाभाव से ही वह काम किया जाए तो उसके बाइ प्रोडक्शन में क्या मिलेगा? लक्ष्मी! यानी लक्ष्मी, वह बाइ प्रोडक्ट है, उसे मेन प्रोडक्शन मत मानना। पूरे जगत् ने लक्ष्मी का ही मेन प्रोडक्शन माना इसलिए फिर, उन्हें बाइ प्रोडक्शन का लाभ नहीं मिलता है। अतः आप सिर्फ, सेवाभाव ही तय करो तो फिर उसके बाइ प्रोडक्शन में ज़्यादा लक्ष्मी आएगी। यदि लक्ष्मी को बाइ प्रोडक्ट में रखेंगे तो ज़्यादा लक्ष्मी आएगी। जबकि ये तो लक्ष्मी के हेतु से ही लक्ष्मी जी का करते हैं इसलिए लक्ष्मी नहीं आती। इसलिए आपको यह हेतु बताते हैं कि इस हेतु को सेट करो 'निरंतर सेवाभाव'। तो बाइ प्रोडक्ट अपने आप ही आता रहेगा। जैसे बाइ प्रोडक्ट में कुछ मेहनत नहीं करनी पड़ती, खर्च नहीं करना पड़ता, वह फ्री ऑफ कॉस्ट मिलता है। उसी तरह, यह लक्ष्मी भी फ्री ऑफ कॉस्ट मिलती है। आपको ऐसी लक्ष्मी चाहिए या *ऑन* की? (मूल कीमत से ज़्यादा में बेचना) की? *ऑन* की लक्ष्मी नहीं चाहिए? तब ठीक है! यह जो फ्री ऑफ कॉस्ट मिलती हैं, वह कितनी अच्छी है! अतः सेवाभाव तय करो, मनुष्य मात्र की सेवा। आपने अस्पताल बनाया है तो उसमें आप अपनी विद्या का उपयोग सेवाभाव से करो। वही आपका हेतु होना चाहिए।

ज्ञानी की सेवा से आता है हल

कृपालुदेव ने बताया है कि, 'तन-मन-धन से ज्ञानी पुरुष की सेवा किए बगैर मोक्ष नहीं है।' अब ज्ञानी पुरुष को धन का क्या करना है?

प्रश्नकर्ता : ज्ञानी पुरुष और धन के बीच कोई कनेक्शन ही नहीं है।

दादाश्री : तो फिर तन की सेवा का उन्हें क्या करना है?

प्रश्नकर्ता : वे तो तन से भी अलग हैं। यह तो सामने वाले के भले के लिए है।

दादाश्री : आपके खुद के लिए करना है। धन का क्या करोगे? ज्ञानी आपकी लोभ की ग्रंथि को तोड़ने के लिए कहते हैं कि अच्छी जगह पर पैसे डालो, ताकि अगले जन्म में आपके काम आएँ और आज लोभ की ग्रंथि छूटे। अगर अच्छी जगह पर डालते हो तो क्या वह अगले जन्म के लिए ओवरड्राफ्ट नहीं है? या फिर खर्च करके खाते हो, वह ओवरड्राफ्ट है? हम मौज-मज़े के लिए खर्च कर दें तो क्या वह ओवरड्राफ्ट कहलाएगा? अगर उसे रेस में डालें तो क्या वह ओवरड्राफ्ट नहीं है?

प्रश्नकर्ता : वह तो बल्कि ओवरड्राफ्ट हो गया।

दादाश्री : वह सब गटर में गया। आप जितना भी खर्च करते हो, वह सब गटर में जाता है इसलिए भगवान ने ऐसा कहा है कि, 'अच्छी जगह पर डालना!' ताकि लोभ की ग्रंथि छूट जाए। फिर चित्त उसी में रहेगा फिर 'आपकी' गाड़ी दौड़ती रहेगी, कोई परेशानी नहीं आएगी। जिसने किसी भी अच्छी जगह पर पैसे डाले, उसे दु:ख आएगा ही कैसे? दु:ख उसकी राह देखकर नहीं बैठा है। वह किसकी राह देखता है? दु:ख उनकी राह देखता है जो खुद पर खर्च करते हैं।

जो कोई भी आत्मा को जान ले और आत्मज्ञानी की सेवा में लग जाए तो उसका हल आ जाता है।

करो महात्माओं की सेवा रूपी यज्ञ

प्रश्नकर्ता : आपने कहा है न, कि जो ज्ञानी की सेवा करते हैं यदि उनकी सेवा करोगे तो वह ज्ञानी की सेवा करने के बराबर है तो क्या महात्माओं की सेवा करना भी ज्ञानी की सेवा करने के बराबर है?

दादाश्री : सारी भूलें मिटाने के लिए या तो (ज्ञानी और महात्माओं की सेवा का) यज्ञ करना पड़ेगा अथवा स्व-पुरुषार्थ करना पड़ेगा। वर्ना अगर यों ही दर्शन कर जाओगे तो भक्ति का फल मिलेगा लेकिन ज्ञान का फल नहीं मिलेगा।

हो सके उतना अपने महात्माओं पर खर्च करना, कसर मत छोड़ना क्योंकि अन्य कोई जागृत देव नहीं हैं। जागृत देव तो यही हैं! फिर से ऐसा मौका नहीं मिलेगा क्योंकि उन्हें किसी से कुछ लेना-देना नहीं है। अत: यदि इन महात्माओं की सेवा हो सके तो वह बहुत उत्तम कहा जाएगा।

क्योंकि अन्य कहीं पर जागृत देव दिखाई नहीं देते। जीते-जागते देव इतने ही हैं कि जिन्हें अब मेरा-तेरा कुछ भी नहीं रहा।

घर-घर में सत्संग होते हैं और जब सब को भोजन करवाते हैं उस दिन कितना आनंद होता है?

प्रश्नकर्ता : बहुत ही ज़बरदस्त।

दादाश्री : इसी तरह इन्हें कितना आनंद हुआ होगा! प्रतिदिन जलेबी बनाना और फलाँ बनाना, बार-बार ऐसा मौका नहीं मिलता!

सेवा, जीते-जागते देवताओं की

प्रश्नकर्ता : यहाँ पर महात्मा, सभी महात्माओं का अच्छी तरह ध्यान रखते हैं।

दादाश्री : इसीलिए मैं कहता हूँ न, जिससे सब लोग सेवा करते रहते हैं। जो कुछ भी हमें मिला हो, वह कम हो तो कम लेकिन खिलाओ। न हो तो अंत में चाय पिलाओ। चाय भी नहीं हो तो पापड़ खिला दो।

यह तो दिखाई देने वाले देव हैं और फिर

जलेबी खाते हैं। चार बर्फी खा जाते हैं और दूसरी दो रखें तो वे भी खा लें, ऐसे देव हैं।

प्रश्नकर्ता : और हमें भी खिलाते हैं, खुद लेकर हमें भी खिलाते हैं।

दादाश्री : हाँ, खिलाते हैं।

प्रश्नकर्ता : दादा, महात्माओं को भोजन करवाने की भावना तो मुझ में शुरू से है पर आज आपने बहुत अच्छा खुलासा किया कि 'जागृत देव हैं।'

दादाश्री : जागृत देव, सच्चे देव। जिन्हें कुछ नहीं चाहिए, वे सभी देव कहलाते हैं।

प्रश्नकर्ता : तो प्रत्यक्ष दादा भगवान की साक्षी में, भूतकाल में मुझसे किसी भी महात्मा के प्रति जो दोष हुए हों या भेदभाव रखा हो...

दादाश्री : नहीं-नहीं। हमारे यहाँ तो नियम है न कि जो भेदभाव रखे, वह महात्मा ही नहीं है। देखने में ऐसा दिखाई देता है फिर भी इसे भेदभाव की तरह तो देखना ही नहीं चाहिए। भेदभाव तो, जब हमारी मिथ्यादृष्टि थी तब थे। आज तो हमें जो प्राप्त हुआ, वही करेक्ट। वही व्यवस्थित। पापड़ दिया तो भी क्या और नहीं दिया तो भी क्या? दादा के लिए जलेबी बनाई और भीतर किसी को दो जलेबियाँ दी तो भी क्या और नहीं दी तो भी क्या?

प्रश्नकर्ता : हमारे यहाँ तो मैंने कभी कोई चीज़ सिर्फ दादा के लिए तो बनाई ही नहीं है।

दादाश्री : ठीक है।

प्रश्नकर्ता : सभी कुछ, जलेबियाँ, मिठाइयाँ सभी के लिए बनवाई हैं।

दादाश्री : बनाओ, तब भी हर्ज नहीं है, नहीं बनाओ, तब भी हर्ज नहीं है।

प्रश्नकर्ता : दादा, कुछ महात्माओं के घर ऐसा नहीं होता....

दादाश्री : नहीं होता है, ऐसा रौब मत मारना। रौब दिखाने पर फिर किसी दिन रौब उड़ा देंगे। उसके बजाय जो हुआ सो करेक्ट। हो सके तब तक हमसे ऐसा नहीं हो तो अच्छा है और यदि हो जाए तो हर्ज नहीं।

प्रश्नकर्ता : अब हमें सबकुछ महात्माओं के लिए ही करना है और अब तो किफायत नहीं करेंगे, आपने 'जागृत देव' कहा है महात्माओं को। यदि कभी हमसे महात्माओं की कोई नेगेटिव बातें हो जाएँ तो हम उन सब के लिए माफी माँग लेते हैं।

दादाश्री : याद करके माफी माँग लेनी चाहिए। जब तक पत्र पोस्ट नहीं किया हो, तब तक उसमें सुधार संभव है। जब तब इस जन्म में हैं तब तक सब साफ किया जा सकता है। जन्म बदलने के बाद कुछ नहीं हो सकेगा।

कार्य से नहीं, टच से प्रभावित होते हैं

प्रश्नकर्ता : एक बात ज़रा, दिल खोलने का मन हो रहा है कि आपके जो भी उत्सव मनाए जाते हैं, जन्मदिन मनाया जाता है, उसे मनाने वालों के भाव बहुत उच्च होते हैं। आने वालों के भी अत्यंत उच्च भाव होते हैं लेकिन एकदम अंत टाइम पर ऐसा हो जाता है कि कोई भी व्यवस्था बिल्कुल भी संभल नहीं पाती और ऐसा, अव्यवस्था जैसा हो जाता है कि अगर हम किसी बाहर वाले व्यक्ति को बुलाते हैं कि 'आइए, इस अवसर पर आइए', तो इस अव्यवस्था को देखकर वे कुछ अलग ही प्रकार के विचार लेकर जाते हैं।

दादाश्री : सही बात है।

प्रश्नकर्ता : दादा! तो अब उसके लिए क्या करना चाहिए?

दादाश्री : ऐसा हो जाता है। उसका क्या कारण है कि इसमें किसी को यश-अपयश की पड़ी नहीं है। ये तो समभाव से *निकाल* (निपटारा) करते हैं इसलिए बाहर खराब दिखाई देगा या नहीं उसकी इन्हें कुछ पड़ी ही नहीं है।

प्रश्नकर्ता : दादा, यह तो बहुत गहन बात है!

दादाश्री : वह मैं जानता हूँ न, कि ऐसा क्यों नहीं हो पाता। तो अब इसमें क्या कर सकते हैं? वह स्वभाव तो छूटेगा ही नहीं न! उसे छोड़कर हमें क्या करना है? जो हुआ वही करेक्ट, इसके और फायदे भी होंगे न! *निकाल* करते चलते बने तो फिर इस तरफ नहीं देखते जबकि उसमें तो अंत तक ऐसा ही रहता है कि 'मेरी बदनामी होगी, मेरा ऐसा होगा, खराब दिखाई देगा।' समझ में आया न? यह। मूल में यह गलती है।

प्रश्नकर्ता : दादा, इससे तो, इस बात से तो हमें बहुत-बहुत खुलासा मिला।

दादाश्री : इसलिए मैं समझ गया कि इसमें बुरा क्या है! उसे धकेलना चाहा लेकिन इसमें क्या कमी है, उसे हम समझ गए लेकिन वह गलती ऐसी नहीं है कि खत्म हो जाए।

प्रश्नकर्ता : वह कमी खत्म नहीं हो सकती लेकिन इससे लाभ भी तो बहुत हैं, वह बात तो ठीक है।

दादाश्री : हाँ, हमें काम से काम है न! हमें क्या कोई कीर्ति और इज़्ज़त बढ़ानी है?

प्रश्नकर्ता : लेकिन दादा, हम अपने वे जो पूर्व के संस्कार लेकर आए हैं न, तो कितनी ही बार उन संस्कारों की वजह ऐसा लगता है कि हम जिन बाहर के लोगों को लेकर आए हैं तो वे लोग भी इससे प्रभावित हों।

दादाश्री : ऐसा कुछ नहीं है कि उनके प्रभावित होने से यह कुछ सुधर जाएगा। वह तो यदि सिर्फ महात्माओं को टच हो जाएगा न, तो भी बहुत हो गया। प्रभावित यानी कि वे इनके कार्य से प्रभावित हो तो उसका कोई अर्थ ही नहीं है न! जो पास में आएगा न, वह प्रभावित हो ही जाएगा।

प्रश्नकर्ता : अब, वे जहाँ से आते हैं वहाँ पर और कुछ तो नहीं होता लेकिन उन लोगों की व्यवस्था और डिसिप्लिन टॉप होते हैं।

दादाश्री : बाकी हर जगह होता है सिर्फ, यहाँ पर डिसिप्लिन नहीं है।

प्रश्नकर्ता : यह तो बहुत हृदय वाली बात की है। अगर कहीं और समारोह में जाएँ तो वहाँ देखते हैं, कि उन लोगों का जो डिसिप्लिन होता है....

दादाश्री : वह सारी बनावट हैं जबकि यहाँ पर तो बनावट नहीं है न!

मत देखना डिसिप्लिन, लेकिन देखना वीतरागता

प्रश्नकर्ता : दादा, यहाँ पर ऐसा होता है कि यदि किसी व्यक्ति को कोई काम सौंपा गया हो, लेकिन वह जैसे ही दादा को देखता है वैसे ही काम को एक ओर रखकर वहाँ चला जाता है, अब उसके लिए क्या करें? मुझे ऐसा तो नहीं होना चाहिए न, मैं तो दादा का काम कर रहा हूँ तो यह भी दादा ही हैं और मुझे वहाँ पर नहीं जाना चाहिए।

दादाश्री : हर किसी की प्रकृति ऐसी नहीं होती न!

प्रश्नकर्ता : दादा, लेकिन यह तो सर्वांश

रूप से ऐसा हो गया है, ये गोपियों जैसा हो गया है। ये तो गोपियों की तरह पति और घर-वर सब छोड़कर एकदम दौड़ते-दौड़ते चले जाते हैं, सब की ऐसी दशा हो गई है!

दादाश्री : यह तो ऐसा ही रहेगा। यह जो है न, यही न्याय है। हर कोई अपनी प्रकृति के अनुसार है। अगर कोई सिर्फ चावल ही खाता हो और वह कहे कि 'अब सभी को चावल ही खिलाओ', तो क्या होगा? आपको शायद ही चावल मिल पाएँगे! वह सब हिसाब के अनुसार है! और जब आप किसी को लेकर आओ न, तब उसे भी बता देना कि 'इन लोगों को ऐसी कुछ पड़ी नहीं है। अतः अंत में ऐसा सब होता है। वह मत देखना। देखने लायक तो वीतरागता है। हाँ, यहाँ तो ऐसा ही है।'

प्रश्नकर्ता : लेकिन डिसिप्लिन रखने में नुकसान क्या है? क्यों नहीं रखना चाहिए?

दादाश्री : उसके लिए कर्ता आत्मा को लाना पड़ेगा।

प्रश्नकर्ता : वहाँ पर कर्ता लाना पड़ेगा और वह तो यहाँ संभव ही नहीं है। इस ज्ञान में वह संभव ही नहीं है।

दादाश्री : वह तो, जो है वही निकलता है।

प्रश्नकर्ता : दादा, इस शंका का समाधान हो गया लेकिन जो पुराने संस्कार हैं, वे परेशान करते रहते हैं।

दादाश्री : यह जो भी है वह ठीक है। हमने भी हिसाब निकाल लिया है न, पहले हमारे मन में ऐसा लगा था कि ऐसा उल्टा क्यों होता है? बाद में वह निकाल दिया। इसका तो निबेड़ा लाना है। यहाँ तो वीतरागता देखनी है, प्रेम देखना है। वह पहले ही बता देना कि इन लोगों की प्रकृति कैसी है। 'यदि वीतरागता देखनी है तो वहाँ आइए', कहना।

अपनी भावना चाहिए, क्रिया नहीं

प्रश्नकर्ता : दादा, इसका अर्थ यह हुआ कि ऐसे अवसर से पहले हमें प्लानिंग (आयोजन) या सिस्टमैटिक (पद्धतिसर) प्रबंध नहीं करना चाहिए?

दादाश्री : प्लानिंग करने में कोई हर्ज नहीं है लेकिन जितना होगा उतना ही माल निकलेगा न, कुछ और नहीं निकलेगा! यदि प्लानिंग करोगे न, फिर भी उसके पास जो माल है वही निकलेगा। नया अहंकार उत्पन्न नहीं होगा न!

प्रश्नकर्ता : लेकिन दादा, ऐसा होता है कि मान लीजिए इस व्यवस्था का काम मुझे सौंपा है कि 'आपको यहाँ पर खड़े रहना है और कोई महात्मा या बाहर के लोग आते हैं, उन्हें आपको इस अनुसार गाइड करना है लेकिन जैसे ही मैं दादा को देखता हूँ तो वह व्यवस्था व्यवस्थित को सौंपकर, मैं तो समूह में घुस जाता हूँ, दादा के साथ।

दादाश्री : वह तो अगर बैन्ड बाजे वालों को ज्ञान दे दें न, तो वे भी इसी तरह आ जाएँगे। मेरा कहना है कि अपना यह मोक्षमार्ग अलग प्रकार का है और वे अलग प्रकार के हैं।

प्रश्नकर्ता : दादा, आपकी वह बात तो हृदय में उतर गई है।

दादाश्री : अतः जब लोग मुझसे कहते हैं कि, 'आपके भक्त एडवान्स नहीं हुए हैं।' तब मैं कहता हूँ कि, 'अभी एडवान्स होना बाकी है।' हमें तो मोक्ष से काम है न, हमें और कोई काम ही नहीं है न!

प्रश्नकर्ता : हम जब लोक कल्याण करने

निकलते हैं और अपनी वह भावना है तो बाद में उस हिसाब से ये सब जो आते हैं, यदि वे ऐसी व्यवस्था देख जाएँगे तो लोक कल्याण की प्रवृति को वेग मिलेगा या फिर वहाँ पर हमें कुछ और सोचना पड़ेगा?

दादाश्री : अपनी भावना होनी चाहिए, लोक कल्याण की क्रिया नहीं। बाकी क्रिया तो भीतर जो माल भरा है, वही निकलेगा। माल जो भरा है वही निकलेगा या कुछ और?

प्रश्नकर्ता : वही निकलेगा, दादा। लेकिन एक प्रश्न यह होता कि जब ऐसा सम्मेलन होता है, जहाँ हम सभी प्रकृतियों को इकट्ठा करते हैं, इतना सबकुछ होता है तो व्यवस्था जैसी चीज़ के बारे में हमें सोचना नहीं चाहिए या फिर उसे व्यवस्थित ही मान लें?

दादाश्री : है ही व्यवस्थित। जितनी लाइनें चित्रित करोगे, उन सब को मिटाना पड़ेगा वापस। हमारे ही चित्रण को हमें ही मिटाना पड़ेगा। एक बार मिटाना अच्छा है। फिर दोबारा वह भूल नहीं होगी न।

देखने जैसी दुनिया

प्रश्नकर्ता : बाकी, एक चीज़ तो निर्विवाद है कि आपके इस समारोह में जो लोग आकर बैठते हैं, उसके बाद जैसे ही वे आपको सुनते हैं, उस समय उन सभी का जो उल्लास होता है और 'दादा भगवान के असीम जय जयकार' बोलते हैं, उसे देखकर अच्छे-अच्छे लोग यहाँ आकर आश्चर्य चकित रह जाते हैं!

दादाश्री : उन्होंने कभी ऐसा देखा ही नहीं होगा न!

प्रश्नकर्ता : इस बारे में किसी से कुछ नहीं कह सकते।

दादाश्री : ऐसी दुनिया देखी ही नहीं होगी न!

प्रश्नकर्ता : लेकिन दादा, हम उन सभी को लाते हैं कि 'अब यह सब देखो,' तब उन्होंने जो पढ़ा है न, वहाँ परेशानी हो जाती है।

दादाश्री : वह तो उन्हें बता देना कि 'यह माल ऐसा है। यहाँ वीतरागता देखने लायक है और कहना 'यदि कोई खास परेशानी हो तो मुझे बताना' बस। यह समूह अलग ही प्रकार का है समूह काम तो अच्छा करता है न! देखो न, वहाँ खाना खा रहे थे तो क्या कभी कोई लड़ाई-झगड़ा हुआ? लड़ाई-झगड़ा नहीं है!

प्रश्नकर्ता : तो हम संस्कार की वजह से जो इस तरह परेशान हो जाते हैं, उसके लिए क्या करें?

दादाश्री : यह सब तो भरा हुआ माल है। औरों में नहीं भरा होगा। इसका कुछ नहीं करना है, भीतर जो है वही रहेगा। नया नहीं आएगा।

प्रश्नकर्ता : वह तो ठीक है दादा, लेकिन ये सब तो पी. एच. डी. की बातें हुई लेकिन इस अवसर पर हम तो इन सभी पाठशाला वालों को बुलाते हैं न। दादा का विज्ञान सभी समझें, दादा का विज्ञान सभी साहित्यकार समझाएँ, अब, उनसे पी. एच डी. का वर्तन कैसे एक्सपेक्ट कर सकते हैं?

दादाश्री : उन्हें बता देना कि 'भाई, यहाँ तो वीतरागता देखने लायक है।' जो बाहर संसार में देखते हो, उसके बजाय यहाँ अलग ही प्रकार का देखने को मिलेगा। यहाँ पर प्रेम देखने की ज़रूरत है। आप जो ढूँढोगे, उसका कोई हल नहीं है।

डेवेलप्ड माइन्ड, सभी को समान मानता है

प्रश्नकर्ता : बड़े-बड़े प्रोग्राम में सभी साथ

होते हैं न, तो कुछ गाँव वाले अपने गाँव वालों की ज़्यादा मदद करते हैं। गरम पानी जल्दी दे देते हैं, चाय दे देते हैं, वह अपने गाँव वालों की मदद करता है और यह अपने गाँव वालों की। तो ऐसे भाव क्यों है और ये भाव क्या नुकसान करते हैं?

दादाश्री : ऐसी खींचातानी सभी जगह होती है। ऐसी खींचातानी तो घर तक रहती है। वह तो मनुष्य का स्वभाव है। इसमें जो बड़े दिल वाले होते हैं न, वे लोग बड़े कहलाते हैं। बाकी, जितने संकुचित दिल वाले होते हैं न, वे तो खुद के घर में भी खींचातानी करते हैं। अरे, पत्नी के साथ भी खींचातानी करते हैं, कहेंगे 'आपका नहीं है, यह हमारा है।' वह तो संकुचित मन कहलाता है। जो डेवेलप माइन्ड वाले होते हैं न, उनका मन बड़ा होता है। वे सभी को समान मानते हैं। ऐसा होता है न भीतर?

हमें उस पर बहुत ध्यान नहीं देना है। जिनका मन संकुचित होगा उनका क्या करोगे? उन्हें भी मोक्ष में जाना है लेकिन उनका मन संकुचित है। उसका क्या इलाज करोगे आप?

प्रश्नकर्ता : लेकिन मैं देखता रहता हूँ।

दादाश्री : बस, सिर्फ देखते ही रहना है।

प्रश्नकर्ता : लेकिन, मुझे ऐसा लगता है कि ऐसा नहीं होना चाहिए।

दादाश्री : नहीं होना और होना चाहिए, वे सब बुद्धि के खेल हैं। जो हुआ वही करेक्ट! हम भी, जो हुआ उसी को करेक्ट कहते हैं न!

ज्ञानी के लिए भी खींचातानी

प्रश्नकर्ता : बहुत से लोग ऐसा कहते हैं कि 'नहीं, दादाजी हमारे यहाँ रहेंगे', वे कहते हैं, 'दादाजी हमारे गाँव में ही रहेंगे।' वह कहेगा, 'नहीं, हमारे यहाँ ज़्यादा रहेंगे', वह खींचातानी ही है न!

दादाश्री : हाँ, लेकिन ऐसा तो होगा ही न, वह तो स्वभाविक रूप से होगा ही। हम सभी से कहते हैं कि 'इस वीक में आएँगे।' लेकिन, हम व्यवस्थित पर छोड़ देते हैं। व्यवस्थित में जो होगा, वही सही। यदि व्यवहार भी आप व्यवस्थित पर छोड़ दोगे न, तो कोई परेशानी ही नहीं क्योंकि ये लोग जो शोर मचाते हैं, उसमें उनके अनुसार कुछ नहीं होता! होता है व्यवस्थित के अधीन, तो फिर किच-किच करने की क्या ज़रूरत है?

प्रश्नकर्ता : कुछ नहीं!

दादाश्री : जो किच-किच करता है, उसे देखते रहना है।

प्रश्नकर्ता : और यदि मुझसे किच-किच हो जाए तो मुझे प्रतिक्रमण कर लेना चाहिए?

दादाश्री : तो आपको देखना है, 'चंदूभाई' क्या किच-किच कर रहे हैं!' ऐसे हमें तो उन्हें देखने का रिवाज रखना। यदि चंदूभाई किच-किच करें तो उन्हें भी देखना है और यदि दूसरा व्यक्ति किच-किच करे तो उसे उसकी फाइल नंबर वन को देखना है। सभी को खुद की फाइल नंबर वन को देखना है। देखने का काम अच्छा है अपना।

प्रश्नकर्ता : सब अपना-अपना खींचते हैं, उसमें क्या कोई गलत या सही तरीका है? उसमें न्याय-अन्याय जैसा कुछ है क्या?

दादाश्री : नहीं, उसे अन्याय नहीं कहेंगे। वह सब तो स्वभाव है मनुष्य का। वह हमें देखते रहना है। मैंने कहा न, कि घर में भी खींचातानी करते हैं।

प्रश्नकर्ता : लेकिन यदि वह स्वभाव सब के सामने दिखाई दे तो...

दादाश्री : लेकिन यह बुरा दिखाई देगा न, वह व्यक्ति बुरा दिखाई देगा। बड़े लोग समझ जाते हैं कि यह व्यक्ति गलत है। ऐसा नहीं होना चाहिए लेकिन वह तो बाहर दिखाई देता है, सब दिखाई देता है।

प्रश्नकर्ता : लेकिन ऐसा है न कि यदि कोई नए जिज्ञासु व्यक्ति आएँ...

दादाश्री : उन्हें तो उल्टा दिखाई देगा फिर भी वह उल्टा भी कभी सीधा होगा लेकिन इस पर चिल्लाने से इस बात का कोई हल नहीं निकलेगा। जिसका कोई हल नहीं हो उसे लेट गो (छोड़ देना) करना है।

सब, अपने-अपने स्वभाव में हैं, किसी का किसी से बैर नहीं है। बरसात, बरसात के स्वभाव में हैं। कितनों को अनुकूल आता है और कितनों को अनुकूल नहीं आता है, कोई भी अपना स्वभाव नहीं छोड़ता है। इसे बजाएँगे तो बजेगा, यदि किसी को पसंद न हो तब भी बजेगा।

हम फूलों को देखते हैं, काँटों को नहीं छूते

इस जगत् में जो कुछ भी हो रहा है, वह प्रकृति के गुणों से हो रहा है, आत्मा के गुणों से नहीं हो रहा इसलिए हर एक को प्राकृतिक गुणों को पहचान लेना चाहिए। प्रकृति के दोषों की वजह से सामने वाला दोषित लगता है। हमें खुद को प्रकृति के गुणों को ही देखना है। इससे क्या होता है कि 'उन' दोषों को मज़बूत होने का अवकाश ही नहीं मिलता।

हमारे इतने सारे, हज़ारों महात्मा हैं फिर भी क्यों सब के साथ बनती है? क्योंकि हम सभी प्रकृतियों को पहचानते हैं। हम उनके काँटों को नहीं छूते, हम तो उनके फूलों को ही देखते हैं!

यदि चंपा, गुलाब की भूल निकाले कि, 'तुझ में काँटे हैं, तुझ में कोई बरकत नहीं,' तो गुलाब उससे कहता कि, 'तू तो सूखे ठूँठ जैसा दिखता है' और झगड़ा हो जाता। बगीचे में यदि ये प्रकृतियाँ बोल सकतीं तो पूरे बगीचे में लड़ाई-झगड़ा हो जाता। उसी तरह यह संसार भी बगीचा ही है। यह (मनुष्य) प्रकृति बोलती है, इसलिए औरों की भूल निकालने से लड़ाई-झगड़े हो जाते हैं।

दादा का काम किए जाओ

अत: हमें इस पीड़ा में नहीं पड़ना है। अपने काम से काम रखो न, सबकुछ कुदरत ही कर रही है। यह सब तो हमारे कहे अनुसार नहीं होगा? हमें ज्ञान हाज़िर करना है, बोलना है कि, 'ऐसा करो'।

इसीलिए मैं कहता हूँ न भाई, आप इन सभी की झंझटों में मत पड़ना। आप अपना काम किए जाओ। जैसे पराया काम हो, उस तरह से करते रहो। दादा का काम हो, उस तरह से आप अपनी तरफ से करते ही जाओ। और कोई झंझट मत रखना। वह तो, जब तक बुद्धि से नापने जाएँगे न, तब तक हमें कुछ मिलेगा ही नहीं। इसीलिए मैंने यह 'व्यवस्थित' दिया है न, कि चिंता मत करना। काम किए जाओ और वह काम भी कैसा? जैसे कि दादा ने सौंपा हो। यह ठीक लगेगा या नहीं?

प्रश्नकर्ता : लगेगा न।

सेवा के लिए खींचातानी, वही रोग

प्रश्नकर्ता : दादा, आपने किसी की कोई सेवा दी हो और यदि वह मुझे अच्छी नहीं लगे तो तुरंत ही अंदर खड़ा हो जाता है!

दादाश्री : 'अच्छा नहीं लगता' शब्द बोला, तभी से वह चक्कर में पड़ गया। 'अच्छा नहीं लगता' तो बोलना ही नहीं है। वह शब्द डिक्शनरी में नहीं होना चाहिए। 'अच्छा नहीं लगता', वह तो एक प्रकार की जेल है, हथकड़ी है। 'अच्छा नहीं लगता' कहा कि हथकड़ी लगी।

'मुझे अच्छा नहीं लगा' कहे, तो चंदूभाई को डाँटना कि, 'तुम्हें दो तमाचे लगाऊँगा।' 'मुझे अच्छा नहीं लगा' ऐसा कहते हो तो ऐसा सब पागल जैसा ही बोलता है! मुझे तो मेड ही लगता है।

प्रश्नकर्ता : फिर मन भी भीतर उल्टा बताता है।

दादाश्री : अरे, बताता है तो उसमें आपका क्या गया? आप शुद्धात्मा, आप देखने वाले और वह दिखाने वाला।

प्रश्नकर्ता : फिर मैं चंदूभाई को डाँटता हूँ।

दादाश्री : डाँटते रहने से अलग हो जाएगा। हमारी समझ ऐसी है न, यदि उसे पकड़ लोगे, तो भीतर अलग हो जाएगा। अंदर से वे तो बोलता है, फिर वही कहता है कि, 'मुझे ऐसा हो गया' इसलिए फिर तुरंत एकाकार हो जाता है।

चंदूभाई जो कह रहा है, उसमें खुद परिणामित हो जाता है। चंदूभाई जो भी कहता है, हमें तो उसे 'देखते' रहना चाहिए बल्कि चंदूभाई को डाँटना चाहिए, कि 'क्यों ऐसे खींचातानी करता है? शर्म नहीं आती?' यह तो सभी के सामने 'मैं ऐसा कर लूँगा, मैं ऐसा कर लूँगा', उससे वह अपने आपको विजेता मानता है। चंदूभाई जो भी करता है, उसके लिए हमें बार-बार डपटना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : चंदूभाई *खेंच* (अपनी बात पर अड़े रहना) रखे तो भले रखे, हमें अलग रहने में क्या हर्ज है? यदि खुद *खेंच* से अलग हो जाएगा न, तो *खेंच* अपने आप ही चली जाएगी।

दादाश्री : वह हो जाता है, ऐसा ही है। लेकिन यह तो आपके *मन में* ऐसा है कि 'मैं इन सब को नहीं करने दूँ, मैं ही कर लूँ। मैं यों कर लूँ।' और 'मैं' करते-करते आप चंदूभाई बन जाते हो!

प्रश्नकर्ता : उस समय खुद चंदूभाई ही बन जाता है।

दादाश्री : यह *खेंच* ही सारा रोग है। यदि *खेंच* छोड़ दे न तो उसका सबकुछ ठीक हो जाएगा। जब *खेंच* छोड़ देते थे तब सब ठीक हो जाता था और *खेंच* पकड़ते ही सब एक हो जाता है! उस *खेंच* को तोड़ने के लिए तो हम दूसरों से कहते हैं कि 'तू ऐसा कर।' जब तक *खेंच* है तब तक चंदूभाई। *खेंच* छूटी, कि तुरंत आत्मा। आपको तो दादा के पास रहने को मिला, वही आश्चर्य है न! आपको यह सब समझ में आता है? इसमें कुछ काम का है क्या?

प्रश्नकर्ता : सब काम का ही है। मुझे ऐसा लगता है कि यह *खेंच* करता है। इतना मुझे समझ में आता है लेकिन फिर पहले की बिलीफ पड़ी हुई हैं न...

दादाश्री : अरे, लेकिन वे बिलीफ किसमें पड़ी हुई हैं? अरे, फिर से वैसा ही कह रहे हो? आत्मा के रूप में अलग कर दिया हूँ फिर भी!

प्रश्नकर्ता : मुझे भीतर इतना समझ में आता है कि यह गलत हो रहा है और कभी मुझे ऐसा भी लगता है कि मैं चंदूभाई से अलग हूँ लेकिन उसके बावजूद भी मेरा ऐसा सबकुछ वापस एक हो जाता है।

दादाश्री : यदि आप चंदूभाई को डाँटने लगोगे तो सब अलग हो जाएगा। डाँटना शुरू करते ही दृष्टि उससे अलग हो जाएगी। यदि वे बातचीत में *खेंच* करे तो कहना, 'चंदूभाई, क्या खींचातानी कर रहे हो? तुम में जानवरपना है या क्या? इसमें खींचातानी क्यों कर रहे हो? बाहर कैसा दिखाई देता है?' इस तरह अच्छी तरह डाँटने में क्या बुराई है? 'दादा कहते हैं तो आप सोचो तो सही', कहेंगे न! और यदि दिन में पाँच-पच्चीस बार डाँटते हो तो अलग ही हो जाएगा। यह हमारा वचन बल है।

प्रश्नकर्ता : आपने डाँटने का कहा था न, तभी से डाँटना शुरू हो गया है।

दादाश्री : यह अच्छा हुआ। चंदूभाई को डाँटा तो खुद आत्मा बन गया।

प्रश्नकर्ता : मैं तो छील ही देता हूँ। फिर अच्छा रहता है और उसके बाद अलग ही रहता है।

दादाश्री : आत्मा अलग रहता है।

प्रश्नकर्ता : फिर यदि कुछ अच्छा करे तो धीरे से उसे कहना पड़ता है कि 'आपने यह अच्छा किया।'

दादाश्री : वैसा भी कहना पड़ेगा, वर्ना फिर बहुत नाराज़ हो जाएगा। वह भी गलत है। फिर ऐसा भी करना पड़ेगा। कहना भी सही कि 'दादाजी को राजी रखा। आपने बहुत अच्छा किया।'

एक बार अलग कर देने के बाद चंदूभाई सेवा करेगा, उसका फल मिलता रहेगा। चंदूभाई 'इस' पक्ष में (शुद्धात्मा में) आ जाना चाहिए। बस, तब तक अलग करना। ऐसा भी कहना, 'आपकी वजह से मुझे संतोष रहता है। आपकी वजह से मुझे इतना आनंद रहता है। पहले जो दुःख होता था, वह बंद हो गया।' चंदूभाई को ऐसा अनुभव होगा न, तो वे इस पक्ष में आते जाएँगे। चंदूभाई को पहले जो दुःख होते थे, वे बंद हो गए' इसलिए फिर खुद उस पक्ष में नहीं जाएगा कि 'भाई, हमें आपका साथ अच्छा लगा!'

प्रश्नकर्ता : ठीक है। उन्हें (चंदूभाई को) भी सुख मिलता है इसलिए उन्हें भी ऐसा लगेगा कि यही करने लायक है।

दादाश्री : हाँ, मैं वही कहता हूँ न!

सेवा है, खुद के कल्याण के लिए

प्रश्नकर्ता : दादा, दूसरों को आपकी सेवा का मौका देते हैं, उससे हमें आनंद रहता ही है।

दादाश्री : रहेगा ही आनंद।

प्रश्नकर्ता : अगर हम कहें कि 'भाई तू सेवा कर', तो मैंने अनुमोदना की न...

दादाश्री : हमें तो सामने वाले से कहना चाहिए कि, 'आप करोगे तो हमें ज़्यादा आनंद होगा।' और सेवा क्या करनी है? चार बार मोज़े पहनाने होते हैं या दो बार मुँह धुलवाना होता है। सेवा क्या करनी है? सेवा शब्द ही कहाँ है? दोपहर को जो हम आपको सेवा देते हैं, हमें उसकी ज़रूरत नहीं है। वह तो सिर्फ आपके मन को शांति रहे इसलिए देते हैं। हमें किसी भी प्रकार की सेवा की ज़रूरत ही नहीं है न! तू ऐसा रखता नहीं है न, मन में भी रखता है क्या तू?

प्रश्नकर्ता : नहीं रखता।

दादाश्री : अब रख ही नहीं पाएगा न! तू भी रखता है न? सेवा तो, अगर पूरी रात पंखा हिलाना पड़े, पूरी रात बैठे रहना पड़े, संडास जाने के लिए उठाकर ले जाना पड़े, जब उठाकर ले जाना पड़े तब सेवा कहलाती है। इसे सेवा कैसे कहेंगे? बस इतना ही है कि मन में मानते हैं।

सेवा करते समय सेट करो व्यवस्थित की आज्ञा

प्रश्नकर्ता : लेकिन दादा, बुद्धि ही मनमानी करवाने की माथापच्ची करती रहती है क्योंकि उसकी मर्जी के अनुसार नहीं होता इसलिए दखल हो जाता है।

दादाश्री : तुझे किस-किस बारे में होता है। खाने के बारे में? सोने के बारे में?

प्रश्नकर्ता : सेवा करने के बारे में ज़्यादा होता है।

दादाश्री : सेवा के बारे में क्या?

प्रश्नकर्ता : कभी कोई (सेवा से) निकाल दे, कभी आने नहीं दे, जब ऐसा होता है तब भीतर दखल हो जाता है।

दादाश्री : यदि निकाल दे तो वह न्याय ही कहलाएगा। कोई निकाल सकता है क्या? वर्ना, तो सवा सौ रुपए देने पर भी कोई निकालेगा! ऐसा इनाम कभी मिलता है, क्या?

प्रश्नकर्ता : मिलता है न, कभी-कभी।

दादाश्री : ऐसा! तब तो बहुत अच्छा है। मैं तो *नोंध (नोट)* करता हूँ। बहुत अच्छा कहलाता है, यदि तुझे निकाल दे तो उसमें किसी का दोष नहीं है।

प्रश्नकर्ता : लेकिन जब ऐसा फोर्स हो कि यहाँ रहना है, तब निकालने से परेशानी होती है न?

दादाश्री : हाँ, उस फोर्स के कारण! जब उल्टा फोर्स हो तब निकालते हैं न! वर्ना दुनिया में कोई नहीं निकाल सकता। उल्टा फोर्स हो यानी कि जहाँ पुलिस वाले रोक रहे हों और वहाँ घुसने जाओ तो फिर तो डंडा ही मारेगा! और निकाल देने पर उसे व्यवस्थित समझेगा तो बहुत आनंद होगा।

प्रश्नकर्ता : दादा, 'व्यवस्थित है' ऐसा रहता है। जो निकालता है उसका भी दोष नहीं दिखाई देता लेकिन खुद के भीतर ही ऐसा होता है कि ऐसे कैसे अंतराय कर्म लेकर आए हैं कि निकलना पड़ रहा है? इसलिए उस आधार पर फिर वह भीतर ऐसा हो जाता है।

दादाश्री : पाँच लोगों से यह बात पूछना कि इसमें किसका दोष है?

जिसे निकाला है न, उसी का दोष है। फिर भी यदि हम बात करेंगे तो मूर्ख ही कहलाएँगे न? अपने हक़ का तो मिले बगैर रहेगा ही नहीं। और *अणहक्क* (जो अपने हक़ का नहीं है) का तो ढूँढ़ने पर भी नहीं मिलता। मार खाने पर भी नहीं मिलता। उसके बजाय सीधे हो जाना क्या बुरा है? तू सीधा हो गया है न? मनमानी करने की अपेक्षा तो अपने घर में भी नहीं रहती। और आपको तो सेवा करना आता ही कहाँ है? आपको इस समूह में, सभी लोगों को सेवा करना ही नहीं आता न? जब सेवा से फुर्सत मिले तभी वह किसी और ही गाँव गया होता है! उसके बाद कोई और घुस जाए तो उसे निकालने की तैयारी करता है।

प्रश्नकर्ता : तो, उस समय व्यवस्थित कह कर केस छोड़ देना है?

दादाश्री : नहीं। छोड़ना नहीं है, व्यवस्थित पर रखने की ज़रूरत ही नहीं है। उस समय देखकर हमें तो आनंद होना चाहिए कि, 'ओहोहो! व्यवस्थित इनके ताबे में आ गया है। कैसा आया है!' उस चीज़ का हमें आनंद होना चाहिए तो वह आपको हेल्प करेगा और फिर आपके ताबे में भी आ जाएगा! वे सब न जाने कहीं चले जाएँगे और वह सेवा आपके ही हिस्से में आ जाएगी।

टकराव में अलग नहीं होना, वही पुरुषार्थ

प्रश्नकर्ता : दादा, यह अहंकार की बात

कई बार घर में भी लागू होती है, संस्था में लागू होती है। दादा का काम करते समय भी बीच में कहीं अहंकार टकरा जाते हैं, वहाँ पर भी लागू होती है। वहाँ पर भी समाधान चाहिए न?

दादाश्री : हाँ, समाधान चाहिए न! अपने यहाँ 'ज्ञान वाला' समाधान लेता है, लेकिन जहाँ 'ज्ञान' नहीं है, वहाँ क्या समाधान लेगा? वहाँ फिर अलगाव होता जाता है, मन उससे अलग होता जाता है। अपने यहाँ अलगाव नहीं होता।

प्रश्नकर्ता : लेकिन दादा, टकराना नहीं चाहिए न?

दादाश्री : टकरा जाना तो स्वभाव है। ऐसा 'माल' भरकर लाया है, इसलिए ऐसा हो जाता है। यदि ऐसा माल नहीं लाया होता तो ऐसा नहीं होता, अत: हमें समझ लेना चाहिए कि 'भाई की आदत ही ऐसी है'। अगर हम ऐसा समझ जाएँगे तो फिर हम पर असर नहीं होगा क्योंकि आदत, आदत वाले की है और 'हम' अपने वाले! और फिर उसका *निकाल* (निपटारा) हो जाता है। आप रुके रहोगे तो झंझट है। बाकी टकराव तो हो ही जाता है। ऐसा तो है ही नहीं कि टकराव नहीं होगा लेकिन सिर्फ यही देखना है कि उस टकराव की वजह से हम एक दूसरे से अलग नहीं हो जाएँ। ऐसा तो पति और पत्नी में भी होता है लेकिन वे फिर वापस एक ही रहते हैं न? ऐसा तो होता है। इसमें किसी पर कोई दबाव नहीं डाला है कि, 'तुम मत टकराना।'

प्रश्नकर्ता : लेकिन दादा ऐसा भाव तो निरंतर रहना चाहिए न, कि टकराव नहीं हो?

दादाश्री : हाँ, रहना चाहिए। यही करना है न! उसके लिए प्रतिक्रमण करना है और उसके प्रति भाव रखना है! फिर से ऐसा हो जाए तो फिर से प्रतिक्रमण करना क्योंकि एक परत चली जाएगी, फिर दूसरी परत चली जाएगी। ऐसा परत वाला है न! मेरा तो जब टकराव होता था, तब नोट करता था कि आज अच्छा ज्ञान पाया! टकराने से फिसल नहीं जाते। जागृत ही रहते हैं न! वह आत्मा का विटामिन है। अर्थात् इस टकराव में झंझट नहीं है। टकराने के बाद एक दूसरे से अलगाव नहीं हो तो वही पुरुषार्थ है। यदि सामने वाले से हमारा मन अलग होने लगे तो प्रतिक्रमण करके राह पर ले आना। हम इन सभी के साथ किस प्रकार ताल-मेल रखते होंगे? आपके साथ भी ताल-मेल बैठता है या नहीं बैठता? ऐसा है कि शब्दों से टकराव पैदा होता है। मुझे बोलना बहुत पड़ता है, फिर भी टकराव नहीं होता न!

टकराव तो होता है। ये बरतन टकराते हैं या नहीं टकराते? *पुद्गल* का स्वभाव है टकराना लेकिन ऐसा 'माल' भरा होगा, तो। नहीं भरा होगा तो नहीं। हमारे भी टकराव होते थे लेकिन ज्ञान होने के बाद टकराव नहीं हुए क्योंकि हमारा ज्ञान अनुभव ज्ञान है और हम इस ज्ञान से सारा *निकाल* करके आए हैं और आपको *निकाल* करना बाकी है।

सेवा में घर्षण से प्रगति के पथ पर...

प्रश्नकर्ता : आप कई बार ऐसा पूछते हैं कि, 'प्रगति हो रही है या नहीं?' तो प्रगति कहाँ दिखाई देती है? यानी कि प्रगति में ऐसा क्या दिखाई देता है? सेवा में वह कैसे पता चलेगा?

दादाश्री : दखल नहीं हो, वह जब किसी के साथ डखोदखल नहीं हो, या फिर अपने आपसे भी दखल नहीं हो, तब। इतना देख ले तो समझो प्रगति हुई है। यदि किसी से दखल हुआ तो बिगड़ गया।

प्रश्नकर्ता : कोई ऐसा समझकर खोजे कि

सेवा में हुए घर्षण प्रगति के लिए है, तो क्या प्रगति होगी?

दादाश्री : लेकिन वे ऐसा समझकर नहीं खोजते! भगवान प्रगति नहीं करवाते, घर्षण प्रगति करवाता है। घर्षण कुछ हद तक आगे ले जा सकता है, उसके बाद तो जब ज्ञानी मिलेंगे तभी काम होगा। घर्षण तो कुदरती रूप से होता है, जैसे नदी में पत्थर आपस में टकराकर गोल हो जाते हैं।

प्रश्नकर्ता : घर्षण और संघर्षण में क्या फर्क है?

दादाश्री : जब निर्जीव चीज़ें टकराती हैं, तब वह घर्षण कहलाता है और जीव टकराते हैं, तब संघर्षण होता है।

प्रश्नकर्ता : संघर्ष से आत्मशक्ति रुंध जाती है न?

दादाश्री : हाँ, सही बात है। संघर्ष हो तब ऐसा भाव निकाल देने को कहता हूँ कि 'हमें संघर्ष करना है'। 'आपमें' संघर्ष करने का भाव नहीं होना चाहिए, फिर 'चंदूभाई' भले ही संघर्ष करे लेकिन ऐसा नहीं होना चाहिए कि अपना भाव रुंध जाए।

किसी से टकराव में आने पर वापस दोष दिखाई देने लगते हैं और यदि टकराव में नहीं आएँ तो दोष ढके रहते हैं। रोज़ के पाँच सौ-पाँच सौ दोष दिखने लगें तो समझना कि पूर्णाहुति नज़दीक आ रही है।

तप से हो जाएगा अंदर साफ

प्रश्नकर्ता : सेवा में हम सामने वाले व्यक्ति से अपेक्षा रखते हैं कि, 'यह ऐसा करे, ऐसा रहे' और यदि वह उस तरह से नहीं करे तब क्या कहलाएगा?

दादाश्री : वह नहीं रहे तो भी व्यवस्थित और रहे तो भी व्यवस्थित।

प्रश्नकर्ता : उससे जो दु:ख होता है, वह?

दादाश्री : वह तप है, वह दु:ख नहीं है, ज्ञान-दर्शन-चारित्र और तप, मोक्ष में जाने के लिए चार पायों (स्तंभ, आधार) की ज़रूरत है, उनमें से आपको चौथा पाया निकाल देना है? तप वह चौथा पाया है। वर्ना फिर तीन पाए का ही पलंग रह जाएगा!

प्रश्नकर्ता : लेकिन वह जो दु:ख होता है, उस दु:ख को किस तरह से समझना है?

दादाश्री : वह तप है, वह दु:ख नहीं है! अब, आप पर दु:ख तो आएगा ही नहीं। तप ही आता है। वह तप तो आना ही चाहिए न! और इसे आंतरिक तप कहते हैं!

प्रश्नकर्ता : ऐसा तप बहुत आता है।

दादाश्री : वह जितना ज़्यादा आएगा न, समझना कि उतना ही अब यह साफ होने लगा है इसलिए आने दो। अभी तो आपको ऐसा कहना है कि 'अभी आप कम आते हो, सभी आओ न!' ऐसा कहना!

प्रश्नकर्ता : उन्हें बुलाते हैं...

दादाश्री : हाँ, बुलाओ-बुलाओ। कहना, अब तो दादा मिले हैं। 'आना हो तो आओ, घबराना मत।' वे लोग भले ही घबराएँ लेकिन हमें नहीं घबराना है!

ज्ञान सहित सेवा से छूटते हैं जन्म

एक-एक शब्द अनुभव में आ जाना चाहिए। जो सुना है, उसे बोलना तो आ जाता है। बहुत दिन साथ में रहेंगे तो आ जाएगा या नहीं?

प्रश्नकर्ता : आ जाएगा न दादा।

दादाश्री : लेकिन अनुभव, एक-एक शब्द अनुभव में आ जाना चाहिए। उसके बाद जब बोला जाए, तब वह 'ज्ञान' कहलाता है। तब तक बुद्धि है। यानी यह ज्ञान इतना सरल नहीं है कि झट से प्रकट हो जाए। सेवा करने से अगला जन्म सुधर जाएगा। स्त्री जन्म छूट जाए, तब भी बहुत हो गया। ऐसा है यह ज्ञान! कैसा है? यदि सिर्फ सेवा करने से ही छूट जाते तो, आप यदि दूर रहोगे तो कैसे छूट पाओगे! अतः आज्ञा में रहो।

प्रश्नकर्ता : आज्ञा पालन करना इतना आसान नहीं है न!

दादाश्री : नहीं! आसान ही है, वह। यदि आपका निश्चय हो तो पालन हो सकता है। सेवा करने से भीतर क्या होता है? सूझ, जिसे अंतर सूझ कहा जाता है, उससे सारी खिड़कियाँ खुल जाती हैं।

दादाश्री की सेवा करना अर्थात् उनकी आज्ञा की सेवा करना! आज्ञा की सेवा करना और दादा की सेवा करना, वे दोनों एक ही हैं।

प्रश्नकर्ता : क्या सेवा से ज़्यादा महत्व आज्ञा का है?

दादाश्री : हाँ, आज्ञा का महत्व है, आज्ञा की सेवा ही दादा की सेवा है, बाकी सब तो बेकार है। 'ज्ञानी पुरुष' की कषाय रहित सेवा करने से मोक्षमार्ग सरल हो जाता है।

आज्ञा व सेवा से *राजीपा*

प्रश्नकर्ता : *राजीपा* (गुरुजनों की कृपा और प्रसन्नता) किस चीज़ से प्राप्त होता है?

दादाश्री : पाँच आज्ञा से तो *राजीपा* प्राप्त हो ही जाता है, वर्ना यदि सेवा करने से *राजीपा* प्राप्त होता है और यदि कुछ समय के लिए उनके पास रहें तब भी *राजीपा* प्राप्त हो जाता है। भले ही एक भी आज्ञा का पालन न करता हो लेकिन सेवा करने से शक्ति इतनी बढ़ जाती है कि सारे आवरण टूट जाते हैं और फिर एकदम से फूट निकलती है। सबकुछ एकदम से ही भभक उठता है। यदि पाँच आज्ञाओं का पालन पचास प्रतिशत भी हो गया तो भी बहुत हो गया।

प्रश्नकर्ता : लेकिन ऐसा है न, यदि दादा की सेवा करेंगे तो दादा का *राजीपा* मिलेगा, दादा की कृपा उतरेगी।

दादाश्री : हाँ, कृपा उतरती है, वह बात तो सही है लेकिन मिलनी चाहिए न? क्या जबरन ले सकते हैं?

प्रश्नकर्ता : लेकिन, ठेठ तक प्रयत्न तो करने चाहिए। और क्या?

दादाश्री : यदि तू जबरन लेने जाएगा न, तो बल्कि हमारी अकृपा होगी। हम देखते हैं कि किसके हिस्से में है! आज किस का व्यवस्थित है, वह देख लेते हैं हम। जो हुआ वह व्यवस्थित। जो हुआ? वह करेक्ट। यदि पंचर हुआ, वह करेक्ट। पंचर किसने किया, वह देखने की ज़रूरत नहीं है।

इस जगत में व्यवस्थित, किसी के भी ताबे में नहीं है। सिर्फ इतना सा, मुझे हाथ लगाना भी किसी के ताबे में नहीं है। सबकुछ व्यवस्थित के ताबे में है न, बेकार में हाय-हाय करते रहते हैं। व्यवस्थित का ज्ञान देने पर भी तुझे समझ में नहीं आता। अज्ञानी भी झगड़ा करते ही रहते हैं न! आपने ऐसा किया और आपने वैसा किया, वह अज्ञान है न! जबकि ज्ञानी झगड़ा नहीं करते क्योंकि वे जानते हैं कि खुद के हाथ में सत्ता है ही नहीं।

प्रश्नकर्ता : लेकिन किसी भी चीज़ के लिए प्रयत्न तो अंत तक करना ही है?

दादाश्री : वह तो, जो प्रयत्न हुआ वही ठीक और यदि नहीं हो पाए तो कोई ज़रूरत नहीं हैं। अपने आप ही आकर रहेगा। आपको तो सिर्फ इतना ही देखना है कि दादा के दर्शन होते हैं या नहीं।

प्रश्नकर्ता : यह तो कैसा होता है कि पाँच आज्ञा तो एक तरफ रह जाती हैं। उनमें *लक्ष* (जागृति) ही नहीं रहता और इस बात पर बहुत टकराव हो जाता है।

दादाश्री : आज्ञा में ही रहना है। उसके लिए क्यों टकराना है। उसमें क्या करने गया?

प्रश्नकर्ता : सब सेवा करते हैं इसलिए हमें भी ऐसा लगता है कि यदि यह मिल जाए तो यही सेवा करनी है ।

दादाश्री : तो बाकी ये सब जिन्हें कोई सेवा नहीं मिलती तो क्या उन्हें नुकसान होता है?

प्रश्नकर्ता : मुझे ऐसा लगता है कि इसमें नंबर लग जाएगा, इसलिए।

दादाश्री : नंबर किसमें लगाना है?

प्रश्नकर्ता : खटपट करता हूँ अंदर।

दादाश्री : खटपट करके क्या करना है तुझे?

प्रश्नकर्ता : मिल जाती है।

दादाश्री : क्या मिल जाती है?

प्रश्नकर्ता : दादा के नज़दीक कोई सेवा मिल जाती है।

दादाश्री : ऐसी सेवा काम नहीं आएगी। कुछ भी नहीं मिलेगा और व्यर्थ में तेरा टाइम बिगड़ता है। सेवा सहज भाव से ही होनी चाहिए! क्या होता है, उसे देखता रह न!

प्रैक्टिकल हो वही सही

प्रश्नकर्ता : यदि सेवा में महात्माओं से भूल हो रही हो तो दादा को बताना चाहिए न, कि 'यह भूल हो रही है।'

दादाश्री : नहीं-नहीं। मुझे क्या लेना देना?

प्रश्नकर्ता : यदि पूछे तो नहीं बताएँगे?

दादाश्री : वह तो खुद को ही दोष ढूँढ निकालने हैं। हम ऐसा कुछ नहीं बताते। हमारा कहा हुआ तो थ्योरी में चला जाएगा। हम ऐसा कहते नहीं हैं न!

प्रश्नकर्ता : यदि खुद देखे तो वह प्रैक्टिकल कहलाएगा?

दादाश्री : वह प्रैक्टिकल। जो प्रैक्टिकलं हो, वही सही है इसलिए हम किसी को दोष नहीं बताते कि, 'आापके इतने दोष है, सुधारना।' ऐसा सब नहीं बताते।

प्रश्नकर्ता : कभी-कभी आप ज़रा सी नैमितिक रूप से टोकते हैं।

दादाश्री : वह तो यों ही हो जाता है किसी के साथ। कोई बहुत नज़दीकी हो न, उसके साथ हो जाता है, वर्ना हमसे नहीं होता है क्योंकि जब उसे खुद को दिखाई देगा तभी काम का है। वर्ना यदि मैं बता दूँ तो वह तो बल्कि *सिलक* (जमापूँजी) ऐसा ही पड़ा रहेगा इस तरफ और उसी में ध्यान रहा करेगा। वह क्या काम आएगा? ऐसे सब विधियाँ करता है, सेवा करता है तो फिर भीतर जागृति बढ़ती जाती है!

सूझ से हल होने वाले कामों में खुद खाता है गर्वरस

प्रश्नकर्ता : हम कुछ काम करते हैं न, तो उसमें कभी बुद्धि से काम होता है और कई

बार बहुतों को सूझ होती है यानी अंतर सूझ। अगर मैं अपना बताऊँ कि 'मुझे ऐसी कुछ सूझ पड़ जाती है और तुरंत ही काम हो जाता है।' वह सूझ से है लेकिन फिर वह खुद मानता है कि 'यह तो मुझे आता है, मैंने किया,' एक्चुअली (वास्तव में) तो वह सूझ करवाती है। साथ-साथ गर्वरस भी चखता है कि 'मुझे कितना अच्छा आता है! जैसा किसी को भी नहीं आता वैसा मुझे आता है।' अंदर ही अंदर वह गर्वरस फिर मीठा लगता रहता है और हमें गिरा देता है फिर उसका अहंकार रहा करता है।

दादाश्री : यानी कि उसमें हम गर्वरस चखते हैं। उस गर्वरस के कारण यदि यह चिपका रहे तो उसे (चंदू को) डाँटना। तब गर्वरस नहीं आएगा, वह रस छूट जाएगा इसलिए फिर मज़ा नहीं आएगा। मज़ा नहीं आएगा लेकिन चंदू से अलग हो जाओगे न! तभी दादा की आज्ञा का पालन कर सकोगे न!

प्रश्नकर्ता : हाँ।

दादाश्री : 'मैंने ठीक किया' ऐसा गर्वरस खाता है।

यह सब वह खुद नहीं करता, यह तो साइन्टिफिक सरकमस्टेन्शियल एविडेन्स करते हैं। मन-बुद्धि-चित्त-अहंकार व हाथ-पैर मिलकर करते हैं। यह तो खुद ही गर्वरस भोगता है। गर्वरस बहुत मीठा लगता है।

जब कमाता है, तब 'मैंने कमाया' कहकर गर्वरस भोगता है और जब नुकसान होता है तब दुःखी हो जाता है। आरोपण करता है, उसी से दुःख हैं। भगवान तो परमानंदी हैं और वही खुद का स्वरूप है।

प्रश्नकर्ता : दादा, कई बार ऐसा लगता है कि 'फाइल-वन ने ही किया है न!' यों दोनों तरह से होता है। वह लगता तो है, चिपकता तो है। 'हाँ, मैंने किया था' ऐसा! मीठा लगता है।

दादाश्री : वही गर्वरस है और वह आपको छूटने नहीं देगा।

अब सेवा में अहंकार को खोदना है

प्रश्नकर्ता : आसपास का व्यवहार भी ऐसा होता है कि खुद के पास जो गिफ्ट है, उसमें खुद के अहंकार को पोषण मिलता है। उसे ऐसी आदत ही पड़ी हुई है कि जहाँ जाए वहाँ उसे सभी ऐसे-ऐसे करते हैं (मान देते हैं), 'आप ऐसे-ऐसे हैं', कहते हैं। तब अंदर सब बहुत मीठा लगता है न, इसलिए खुद का 'मैं'पन पूरा क्रेक होता जाता है न?

दादाश्री : लेकिन वह निर्जीव है। अपना ज्ञान प्राप्त करने के बाद उसमें जीव नहीं रहता।

प्रश्नकर्ता : जीव नहीं रहता लेकिन निर्जीव परेशान करता है न?

दादाश्री : निर्जीव बढ़ता नहीं है। जितना है उतने का हल आ जाता है।

प्रश्नकर्ता : दूसरों को नुकसान होता है न?

दादाश्री : नुकसान तो होता है। खुद को और दूसरों को, दोनों को नुकसान होता है लेकिन निर्जीवपन है इसलिए दोनों को उतना ज़्यादा नहीं होता। ज्ञान में से गिर जाएँ, ऐसा नहीं होता। वर्ना तो इन्हें यह ज्ञान कब का फर्स्ट क्लास हो गया होता। लेकिन यह तो ज़रा दखल करता है कि 'मैं कुछ हूँ', 'मैं कुछ हूँ'। तो 'मैं' का रह गया है। उस 'मैं' को निकालने की कोशिश करता हूँ लेकिन निकल नहीं पाता।

वह 'मैं' सेन्सिटिव हो गया है इसलिए यह

सब दखल है, मैंने कहा। 'अरे नहीं है किसी में भी! जब मैं ही नहीं हूँ किसी में, तो आप कहाँ से आ गए?' फिर भी उनका 'मैं' नहीं जाता। वर्ना यह ज्ञान ऐसा है कि प्रकट हो जाता प्रदीप्त हो जाता है। 'मैं' का भला क्या करना है? 'मैं' को तो निकालना है इसलिए आपको हमारा तरीका समझा देता हूँ। किसी में भी दखल करने जैसा नहीं है।

यह तो हर एक बात में बोलता है। घड़ी की बात निकालकर 'फलाना होता है, फलाना...' अरे, तू किस बारे में समझता है? संडास जाना आता नहीं और बेकार ही लोग दखल करते रहते हैं और भीतर 'मैं' 'मैं' करता रहता है। कर्म के अधीन हैं बेचारे!

अहंकार मान बैठा है न कि 'मैं कुछ हूँ'! जितने शब्द बोलेंगे, वे सभी वापस आएँगे। कहेंगे, 'आपको क्या है?' तो क्या हम जान नहीं जाएँगे कि इस व्यक्ति ने हमारे शब्द वापस कर दिए? तो फिर से बोलें ही क्यों? यह जितना भी सामान है न अहंकार का, जब तक इसे संपूर्ण रूप से जड़ से निकाला नहीं जाएगा तब तक उसे बार-बार उत्पन्न होते देर नहीं लगेगी। कैसे संयोग कब आ जाएँ, कहा नहीं जा सकता इसलिए अब इसका क्या करना है? अज्ञानता तो चली गई। अब अहंकार को खोदने का प्रयत्न करना होगा। यह ज़रूरी अहंकार, वह तो ड्रामेटिक अहंकार है ही लेकिन दूसरा अंदर उलझाता रहता है चुपचाप। उसका पता नहीं चलता।

सत्ता के दुरूपयोग से सत्ता चली जाती है

इतनी करुणाजनक लाइफ है और इसमें ऐसे अहंकार करने जाते हैं, पागलपन करते हैं, उससे बहरे हो गए तो? या फिर आखें कमज़ोर होने लगें तो? अहंकार किसलिए? जो आधार देने जैसे लोग हैं तो उन्हें अहंकार नहीं होता। जो आधार देने जैसे नहीं हैं, वहाँ अहंकार है!

जब तू स्कूल में पढ़ता था तब अहंकार कहाँ गया था कि अभी वह अहंकार जागा है? 'सर' कुर्सी पर बैठते थे और हम नीचे बैठते थे। उस समय अहंकार क्यों नहीं चढ़ा? यह तो कुछ सत्ता वगैरह हाथ में आती है न, तो चढ़ बैठता है और कुदरत का नियम ऐसा है कि यदि सत्ता का दुरूपयोग किया तो सत्ता चली जाएगी। जो सत्ता आपको प्राप्त हुई है उस सत्ता का यदि आप दुरूपयोग करोगे तो वह चली जाएगी। मैं जो इस ज्ञानी के पद पर बैठा हूँ और यदि मैं उसका दुरूपयोग करूँ तो मेरा यह पद चला जाएगा, अपने आप ही। यदि दुरूपयोग नहीं करूँ और दूसरी तरह से सिद्धियाँ भुनाऊँ, तब वहाँ कुदरत में पकड़ा जाऊँगा। सिद्धियाँ हैं क्या?

प्रश्नकर्ता : हैं।

दादाश्री : उसका दुरूपयोग करेगा तो क्या होगा? पद चला जाएगा। किसी भी चीज़ का दुरूपयोग करोगे तो, उस पद को खो दोगे।

जब तक खुद के स्वरूप का भान नहीं हो जाता तब तक मार्केट मटेरियल (बाजारू माल) कहा जाएगा। उसका क्या इगोइज़म रखना? अगर इगोइज़म रखना ही हो तो वह ज्ञानी पुरुष को रखना चाहिए, जिनके पास पूरे ब्रह्मांड की सत्ता है लेकिन उनमें इगोइज़म है ही नहीं। जहाँ सत्ता है वहाँ इगोइज़म नहीं है। जहाँ सत्ता नहीं है वहाँ पर इगोइज़म है। उनके पास पूरे ब्रह्मांड की सत्ता है फिर भी ज्ञानी पुरुष बालक समान हैं!

दादाजी की सेवा तो ग़ज़ब की चीज़ है

प्रश्नकर्ता : मेरे साथ कैसा है कि पूरा

समय आपकी सेवा में रहता हूँ इसलिए आत्मा याद नहीं आता, आज्ञा भी याद नहीं आती..

दादाश्री : यदि आपको याद नहीं रहेगा तो भी हर्ज नहीं। दादा की सेवा तो ग़ज़ब की चीज़ है। उसे आत्मा को याद रखने की ज़रूरत ही नहीं है।

प्रश्नकर्ता : फिर उस समय दादा ही याद रहते हैं।

दादाश्री : लेकिन यह देखने की ज़रूरत है कि भक्ति किसकी होती है। भले ही आत्मा याद रहे या ना रहे, वह *लक्ष* (जागृति) तो मैंने दिया ही है, वह *लक्ष* तो आपको कभी न कभी आकर रहेगा लेकिन देखना यह है कि वह जो भक्ति है, वह किसकी है? जिसकी भक्ति करते हो, उसी रूप बनते जाते हो।

प्रश्नकर्ता : तब तो बहुत उत्तम ही है दादा।

दादाश्री : हाँ, वह उत्तम है इसीलिए तो कहता हूँ न कि भाई, यह इतना उत्तम आपको मिल गया है। आपका पुण्य जागा है। पुण्य तो किसी-किसी का ही जागता है न? मैं सेवा करने दूँ, बिल्कुल भी ऐसा कच्चा नहीं हूँ। जब पैर टूटा न, तभी नीरू बहन को सेवा देनी पड़ी। वर्ना मैं नहीं देता। मैंने ज़िंदगी में किसी की भी सेवा नहीं ली है।

तू तो मशीन की भक्ति करता है। जिसकी भक्ति करेगा उसी जैसा बन जाएगा। श्रुतज्ञान की भक्ति से एकदम से जागृति हो गई और उजाला हो गया। अब इस मशीन की भक्ति करने से वापस उजाला बंद हो जाएगा। यह देखना है भक्ति किसकी करता है। आत्मा का स्वभाव है कि जिसकी भक्ति करता है, वैसा ही बन जाता है। इसलिए कहता हूँ न कि नीरू बहन का बहुत बड़ा पुण्य जागा है! ऐसा जो कहता हूँ लोगों से, वह क्यों कहता हूँ? वर्ना कहता ही नहीं न लोगों से!

प्रश्नकर्ता : दादा, मुझे भी आज वह पुण्य कुछ ज़्यादा ही समझ में आया!

दादाश्री : तुझे समझ में आता है? ज़ोखिम किसमें हैं और किसमें नहीं, ऐसा। किसकी भक्ति की जिससे यह उजाला हो गया? आत्मा जैसा चितंवन करता है वैसा ही बन जाता है। आत्मा का मूल लक्षण यह है कि जैसा चितंवन करता है जिसकी भक्ति करता है उसी जैसा बन जाता है। इसलिए सब से कहता हूँ न, ज्ञानी के पास पड़े रहने को। लेकिन जाने क्यों देते हैं? फाइलें हैं तो फाइलों का *निकाल* (निपटारा) तो करना ही पड़ेगा।

और 'उन्हें' यदि अन्य कोई ऐसी जागृति नहीं रहती तब मैं ध्यान नहीं देता, उसका क्या कारण है? कि सही कारण का सेवन तो हो रहा है। ज्ञानी की ऐसी भक्ति व सेवा नहीं मिलती न! यह कारण ही नहीं मिलता!

ध्येय कैसा रखना है कि, 'दादाजी की सेवा करनी है' और भाव सहज रखना है। दादा की सेवा मिलनी तो बहुत उत्तम चीज़ है न! बहुत ज़्यादा पुण्य हो, तब मिलती है, वर्ना नहीं मिलती न! यों हाथ भी नहीं लगा सकते न! एक बार यों हाथ लगाने को मिले तो, वह भी बहुत बड़ा पुण्य कहलाएगा। ऐसा हो जाए तो मन में मानना कि बहुत दिनों में यह प्राप्त हुआ है, इतना भी क्या कम है?

डिस्चार्ज कषाय खाली होने पर बनता है निमित्त

प्रश्नकर्ता : दादा, आप जिस प्रकार दूसरों के सुख के लिए प्रयत्न करते हैं और कितनों को भयंकर दु:खों की यातना में से परम सुखी

बना देते हैं, तो हमें यदि वैसा बनना हो तो बन सकते हैं या नहीं?

दादाश्री : हाँ, बन सकते हो। परंतु आपकी उतनी कपैसिटी हो जानी चाहिए। आप निमित्त रूप बन जाओ। उसके लिए मैं आपको तैयार कर रहा हूँ, वर्ना आप करने या बनने जाओगे, तो कुछ भी नहीं हो पाएगा!

प्रश्नकर्ता : तो निमित्त रूप बनने के लिए हमें क्या करना चाहिए?

दादाश्री : यही सब जो मैं बता रहा हूँ उससे (कुदरत) निमित्त रूप बनाती है। उससे पहले कुछ प्रकार का 'कचरा' निकल जाना चाहिए।

उसमें किसी पर गुस्सा होने का, किसी पर चिढ़ने का ऐसे सब हिंसक भाव नहीं होने चाहिए। हालाँकि वास्तव में आपमें ये हिंसक भाव नहीं हैं, ये आपके 'डिस्चार्ज' हिंसक भाव हैं, लेकिन जो 'डिस्चाज' हिंसक भाव हैं, जब वे खत्म हो जाएँगे तब ये सब जो शक्तियाँ हैं, वे 'ओपन' (प्रकट) होंगी। 'डिस्चार्ज चोरियाँ', 'डिस्चार्ज अब्रह्मचर्य', ये सभी 'डिस्चार्ज' खाली हो जाएँगे, उसके बाद औरों के लिए निमित्त बनने की शक्ति उत्पन्न होगी! यह सब खाली हो जाए तो आप परमात्मा ही बन गए! हमारा यह सब खाली हो गया है इसीलिए तो हम निमित्त बने हैं!

प्रश्नकर्ता : यानी पहले हमें 'ज़ंग' खाली करने का काम करना है।

दादाश्री : पुरुषार्थ करने से सबकुछ होगा! पुरुष बना इसलिए पुरुषार्थ में आ सकता है, ऐसा सब हमने कर दिया है! अब आप अपनी तरह से जितना पुरुषार्थ करो, उतना आपका!

गुप्त सेवा से आते हैं सिन्सियरिटी के स्पंदन

प्रश्नकर्ता : आपका एक ऐसा वाक्य है कि आप गुप्त रूप से सेवा कर रहे होंगे और उसकी किसी को भी जानकारी नहीं हो, किसी को भी पता नहीं चला होगा, तब भी जगत् को उसके स्पंदन पहुँचे बगैर नहीं रहेंगे, सिन्सियरिटी का ऐसा नियम है।

दादाश्री : हाँ, ऐसा नियम है।

प्रश्नकर्ता : उसे खुद को गाने की ज़रूरत नहीं है कि, 'मैं ऐसा हूँ और वैसा हूँ'।

दादाश्री : कुछ भी कहने की ज़रूरत नहीं पड़ती, पता चल ही जाता है। चोरियाँ करे तब भी पता चल जाता है तो फिर यह तो...! जब बहुत गुप्त रखी चीज़ें उजागर होती हैं तो सिर चढ़कर बोलती है।

हर एक बात में सिन्सियर रहना, वह मोक्ष में जाने की निशानी! किसी को पता चले बिना भी अगर तू दुनिया के लिए कुछ अच्छा करेगा तब भी लोग जान जाएँगे, यह दुनिया का एक सब से बड़ा नियम है।

प्रश्नकर्ता : मुझे ऐसा था कि गड़बड़ कर लो, यानी कि ऐसा सब चलता है।

दादाश्री : उसी से सब बिगड़ गया है न! सत्य हमेशा ही उगता है, वर्ना तो उगा हुआ पेड़ भी सूख जाएगा।

सामने वाला धोखा दे तब भी आपको सिन्सियर रहना है। यह पार उतरने की चाबी है!

मूक सेवा ज्ञानी की दृष्टि से

प्रश्नकर्ता : लेकिन दादा, सेवा तो कन्टिन्युअस मिलती रहती है न? इतनी सेवाओं में हमेशा सिन्सियर नहीं रह पाते हैं न?

दादाश्री : क्या सेवा करनी है? दो-चार बार दवाई देने को सेवा कहते हो? सेवा किसे कहते

हो? घर में नौकर रखें तो क्या वह नहीं देगा? सेवा के लिए क्या ऐसे ऑफिसर रखे जाते होंगे?

तू सेवा किसे कहता है? आप लोग नहलाते हो इसलिए हम नाहते हैं। वर्ना हम, नौकर से कह देते कि, 'तू बाल्टी भरकर रख दे तो हम नहा लेंगे।' इसका भला हमें क्या करना है? सेवा क्या करनी है? सेवा तो कब कहलाती कि कहीं पर उपदेश देने जाना हो, ऐसा कुछ करना हो कि लोगों का कल्याण हो। कितने लोगों को उपदेश दे आया? लोगों का कल्याण करने को हम सेवा कहते हैं। जो हमारा ध्येय पूरा करे, उसे हम सेवा कहेंगे। नीरू बहन, आप वाणी का सब लिखते हो, उसे हम सेवा कहते हैं। दो आप्तवाणियाँ तैयार हो जाएँ तो उतनी आपने सेवा की!

मैंने तुम्हें सौ का नोट दिया और तुम सौ के छुट्टे लेकर आए, उसमें तुमने क्या सेवा की? लेकिन उसके पीछे भावना क्या थी, यह हम देख लेते हैं और कुछ नहीं देखते।

बाकी, सेवा तो उसे कहते हैं कि तू काम कर रहा हो तो मुझे पता तक नहीं चले, वह सेवा कहलाती है। मूक सेवा होनी चाहिए। पता चल जाए उसे सेवा नहीं कहेंगे।

मूक सेवा होनी चाहिए

प्रश्नकर्ता : संक्षेप में, उन्हें जो अच्छा लगे वही करना चाहिए हमें।

दादाश्री : हाँ। इसी तरह इन ज्ञानी पुरुष की बाह्य या आंतरिक मूक सेवा करनी चाहिए। क्या कहा? मूक सेवा। सभी चीज़ें मिलेंगी। बाहरी या आंतरिक, बाहर रहकर मूक सेवा करो या अदंर रहकर करो। मेरे पास आकर करो या बाहर से करो लेकिन मूक सेवा होना चाहिए। कैसी?

प्रश्नकर्ता : मूक सेवा।

दादाश्री : खुद को भी पता न चले मैं कि यह सेवा कर रहा है।

सेवा ऐसी मूक हो या बोलकर लेकिन *राजीपा* प्राप्त किए बगैर तो रहेगी नहीं न, लेकिन दोनों को उसके अलग-अलग फल मिलते हैं। उसे प्रत्यक्ष फल मिलेगा और उसे मूक फल मिलेगा कि 'ऐसा ग़ज़ब का कहाँ से आया, वह समझ में नहीं आएगा।'

मूक सेवा कैसे करनी चाहिए

प्रश्नकर्ता : मूक सेवा कैसे करनी चाहिए? आपको याद करें तो वह कुछ कहलाएगा क्या?

दादाश्री : याद करने की ज़रूरत ही नहीं है। याद तो बहुत लोग करते हैं, दादा, दादा। उन्हें राज़ी करने के लिए याद नहीं करना है कि कैसे राज़ी हों हम पर! खूब राज़ी हो जाएँ हम पर! उन्हें कुछ भी नहीं चाहिए। ज्ञानी पुरुष अर्थात् जिन्हें किसी चीज़ की भीख नहीं होती। वहाँ लक्ष्मी की भीख नहीं है, विषय की नहीं है, मान की नहीं है, कीर्ति की भीख नहीं है, शिष्य बनाने की भीख नहीं है, मंदिर बनाने की भीख नहीं है, पैसा इकट्ठे करने की भी भीख नहीं है। किसी भी प्रकार की भीख नहीं है। फिर उन्हें खुश करने के लिए और क्या चाहिए? तो हमें उसका पता लगाना चाहिए जबकि संसार के लोग तो अगर हम बाहर से कोई चीज़, दो साड़ियाँ ला दें, तब भी खुश हो जाएँगे।

प्रश्नकर्ता : लेकिन वह मूक सेवा कैसे करनी है?

दादाश्री : ज्ञानी, जिस हेतु के लिए घूमते हैं उस हेतु में हेल्प करना। ज्ञानी को कुछ भी नहीं चाहिए फिर भी वे बहत्तर साल की उम्र में क्यों घूमते हैं? उस हेतु में हेल्प करो उसे मूक

सेवा कहते हैं। मैं जो कह रहा हूँ, वह आपको समझ में रहा है?

प्रश्नकर्ता : समझ में रहा है...

दादाश्री : हेल्प हो, ऐसा यदि आप करने लगो तो तब हम समझ जाएँगे कि 'ओहोहोहो ये भाई काम कर रहे हैं।'

प्रश्नकर्ता : तो फिर मेरा काम हो जाएगा न?

दादाश्री : ज़रूर। वही, वही हेतु। बाकी, न तो हमें पैसा चाहिए, न ही हमें कुछ चाहिए आपसे। न तो हमें पैर दबवाने हैं या हमें शरीर के लिए भी कुछ नहीं चाहिए। सिर्फ, हम जो काम करने निकले हैं, उस काम में यदि आप हेल्प करोगे तो हमें ऐसा लगेगा कि आप हमारा काम कर रहे हो।

यह शरीर सेवा में फना कर दो। अनंत जन्मों से यह शरीर पत्नी, बच्चों और घर के लिए ही काम में आया है। तो इस एक जन्म में औरों की सेवा के लिए ही फना हो जाओ। अनंत जन्मों से पत्नी व बच्चों के लिए खुद का उपयोग करके सिर्फ कषाय ही किए हैं। जो अपना नहीं है उनके लिए काम करो।

टेका दो कल्याण के तंबू में

यह शरीर तो हमें फिर से मिलेगा ही लेकिन यदि कोई दर्शन करने आए तो, उसका भाव नहीं टूटना चाहिए।

मेरा 'आइडिया' (भाव) ऐसा है कि पूरे जगत् में 'इस' 'विज्ञान' की बात कोने-कोने तक पहुँचानी है और हर एक जगह पर शांति होनी ही चाहिए। मेरी भावना, मेरी इच्छा जो भी कहो मेरा सबकुछ यही है! हमारी भावना है कि लोगों का कल्याण हो, जिस तरह हमारा कल्याण हुआ उसी तरह सभी का कल्याण हो, हमारी ऐसी भावना रहती है।

इस पब्लिक का, हिन्दुस्तान का कैसे कल्याण हो, उसकी पैरवी में हूँ। मैं आत्मा बनकर, पुरुष बनकर बोलता हूँ और पुरुषार्थ करने निकला हूँ। किस तरह से हिन्दुस्तान और फॉरेन पर असर हो, उसी के लिए मेरा यह कार्य कर रहा हूँ। इसमें जो सपोर्ट दे सकें, देना, इस तंबू में। हमने जो तंबू बनाया है। उसे सपोर्ट करना चाहिए न!

प्रश्नकर्ता : हाँ।

दादाश्री : और पूरे संसार का नक्शा ही बदल जाएगा। नए उपदेशक तैयार होंगे। पुराने उपदेशक रिटायर हो जाएँगे और यदि रिटायर नहीं होंगे, तब भी नए उपदेशक को देखकर ही रिटायर हो जाएँगे।

इस कल्याण के तंबू में यों ही हाथ लगाओगे, तब भी तंबू खड़ा रहेगा, सहारा दोगे तब भी दो लोगों का कल्याण हो जाएगा।

लोक कल्याण करते-करते देह छूट जाए, उसके समान तो और कुछ भी नहीं है न! लोग व्यापार करते-करते मर जाते हैं, आराम करते-करते मर जाते हैं, उसके बजाय यदि लोक कल्याण करते-करते जाएगा तो क्या बुरा है?

जगत् का काम करोगे तो आपका काम यों ही होता रहेगा, तब आपको आश्चर्य होगा!

भावना से भी कल्याण होता है। भावना कौन कर सकता है? जो महा पुण्यशाली हो, जिसे जगत् में किसी भी चीज़ की भीख या लालच नहीं रही, वह!

जब तक अपनी आँखें स्वच्छ (निर्मल) नहीं हो जातीं, तब तक सामने वाले का कल्याण नहीं

होगा इसीलिए तो 'मैं' सभी को दर्शन करवाता हूँ। स्वच्छ आँखें, वही कारुण्यता है, अन्य कोई भाव नहीं।

सेवा का फल, सेवक में से सेव्य

ज्ञानी पुरुष की सेवा करने से अभ्युदय फल प्राप्त होता है। यह जो सेवा कर रहे हो न, उसका फल, सेवाफल कहलाता है। इस सेवा का भौतिक फल नहीं, आध्यात्मिक फल मिलता है। इतना उच्च फल मिलता है कि खुद सेवक में से सेव्य बन जाता है। इस दुनिया में जितने भी सेव्य हुए हैं, वे सेवक पद में से ही सेव्य बने हैं। आप सेव्य कब बनोगे? यदि आप सेवक बनकर सेव्य की सेवा करोगे तो आप सेव्य बनोगे।

प्रश्नकर्ता : सेव्य बनने में कोई लाभ नहीं है। सेव्य को बहुत जोखिम है।

दादाश्री : हर कोई ऐसा नहीं बन सकता। उसका अभ्यास नहीं होता। आपके लिए ऐसा नहीं होना ही अच्छा है न!

सेवा कभी जोखिम वाली होती ही नहीं है। जिसे सेवा से संबंधित कुछ भी नहीं आता उसे यदि सेवा मिल जाए तो उसका काम निकाल देती है, वह सेव्यपद लाती है।

प्रश्नकर्ता : क्या एक खास स्टेज तक पहुँचे बगैर सेव्यपद में जोखिम नहीं है?

दादाश्री : कोई जोखिम नहीं। वह प्राप्त होना चाहिए। वह प्राप्त हुआ कि चल निकलेगा।

प्रश्नकर्ता : जो सेवा करता है उसके लिए नहीं, जो सेवा लेता है और उसके लायक नहीं हो फिर भी किसी से सेवा ले तो उसके लिए वह जोखिमी है या नहीं? सेवा करने वाले को तो कभी जोखिम है ही नहीं न!

दादाश्री : किसी ने सेवा ली हो तो बहुत जोखिम है।

प्रश्नकर्ता : मैं यही कहना चाहता हूँ कि यदि वह खुद लायक नहीं हुआ हो।

दादाश्री : हाँ, तो बहुत जोखिम है। उस जैसा कोई और जोखिम नहीं है। बहुत बड़ा जोखिम!

प्रश्नकर्ता : ज्ञानी सेव्यपद में रख देते हैं?

दादाश्री : वह तो उसके स्वभाव से ही होता रहता है। उसके स्वभाव से ही हो जाता है।

सेव्यपद में रखने का किसी को कोई अधिकार ही नहीं है न। वह अपने आप ही फल देता है।

प्रश्नकर्ता : तो फिर जोखिम नहीं रहेगा न?

दादाश्री : फिर कोई जोखिम नहीं रहेगा। ज्ञानी पुरुष की जो कुछ भी सेवा की जाए, उसमें जोखिम नहीं है। अज्ञानी के पास हो तो वहाँ जोखिम है। यहाँ पर तो किसी भी तरह का जोखिम नहीं है।

हमें अपना सेव्यपद गुप्त रखकर सेवक भाव से काम करना चाहिए। 'ज्ञानी पुरुष' तो पूरे 'वर्ल्ड' के सेवक और सेव्य कहलाते हैं। पूरे संसार की सेवा भी 'मैं' ही करता हूँ और पूरे संसार की सेवा भी 'मैं' ही लेता हूँ। यदि यह तुझे समझ में आ जाएगा तो तेरा काम निकल जाएगा!

'हम' यहाँ तक की ज़िम्मेदारी लेते हैं कि कोई इंसान अगर हमसे मिलने आए तो उसे 'दर्शन' का लाभ प्राप्त होना ही चाहिए। कोई 'हमारी' सेवा करे तो उसकी ज़िम्मेदारी हम पर आ जाती है और हमें उसे मोक्ष में ले ही जाना पड़ता है।

जय सच्चिदानंद

स्पेशियल लाईव टेलिकास्ट देखिए अरिहंत चेनल पर

पारायण (विशेष सत्संग) आप्तवाणी - 13 (उ.) तथा आप्तवाणी - 14 भाग-1 पर गुजराती भाषा में

23 से 29 दिसम्बर हररोज सुबह 10 से 12-30 तथा शाम 4-30 से 7

30 दिसम्बर सुबह 10 से 12-30 तथा शाम 5-30 से 8

पूज्य नीरूमाँ / पूज्य दीपकभाई को देखिए टी.वी. चैनल पर...

भारत
- **'दूरदर्शन'-नेशनल** पर सोम से शनि सुबह 8-30 से 9, रवि सुबह 6-30 से 7
- **'दूरदर्शन'-मध्यप्रदेश** पर सोम से शनि दोपहर 3-30 से 4, रवि शाम 6 से 6-30 (हिन्दी में)
- **'दूरदर्शन'-बिहार** पर हर रोज़ सुबह 7 से 7-30 तथा शाम 6-30 से 7, शुक्र शाम 5 से 5-30 (हिन्दी में)
- **'दूरदर्शन'-उत्तरप्रदेश** पर सोम से शनि रात 8-30 से 9 (हिन्दी में)
- **'उड़ीसा प्लस' टीवी** पर सुबह 7-30 से 8 (हिन्दी में)
- **'दूरदर्शन'-सह्याद्रि** पर हर रोज़ सुबह 7 से 7-30 (मराठी में)
- **'दूरदर्शन'-चंदना** पर सोम और शुक्र रात 7-30 से 8 (कन्नड़ में)
- **'दूरदर्शन' गुजरात - गिरनार** पर सोम से शनि दोपहर 3-30 से 4 (गुजराती में)
- **'दूरदर्शन' गिरनार** पर हर रोज़ रात 10 से 10-30 (गुजराती में)
- **'अरिहंत' चेनल** पर हर रोज़ रात 8 से 9 (गुजराती में)
- **'दूरदर्शन'-गिरनार** हर रोज़ पर सुबह 9 से 9-30 (गुजराती में)
- **'अरिहंत'** पर हर रोज़ सुबह 3 से 3-30 तथा शाम 5 से 5-30 (गुजराती में)

USA-Canada
- **'SAB-US'** पर हर रोज़ सुबह 7 से 7-30 EST
- **'Rishtey-USA'** पर हर रोज़ सुबह 7 से 7-30 तथा 8 से 8-30 (हिन्दी में) EST
- **'TV Asia'** पर हर रोज, सुबह 7-30 से 8 EST (गुजराती में)

UK
- **'वीनस' टीवी** पर हर रोज़ सुबह 8 से 8-30 (हिन्दी में)
- **'SAB-UK'** पर हर रोज़ सुबह 7-30 से 8 - Western European Time (6.30am-7am GMT)
- **'Rishtey-UK'** पर हर रोज़ सुबह 7 से 7-30 Western European Time (6am-6-30am GMT)
- **'वीनस' टीवी** पर हर रोज़ सुबह 8-30 से 9 (गुजराती में)

Singapore - **'SAB- International'** पर हर रोज़ सुबह 8-30 से 9 (हिन्दी में)

Australia - **'SAB- International'** पर हर रोज़ सुबह 11-30 से 12 (हिन्दी में)

New Zealand - **'SAB- International'** पर हर रोज़ दोपहर 1-30 से 2 (हिन्दी में)

CAN-Fiji-NZ-Sing.-SA-UAE - **Rishtey-Asia'** पर हर रोज़ सुबह 7 से 7-30 तथा 8 से 8-30 (हिन्दी में) EST

USA-UK-Africa-Aus. - **'आस्था'** (डीश टीवी चेनल 849-युके, 719-युएसए) पर सोम से शुक्र रात 10 से 10-30

'दादावाणी' के सभी सदस्यों के लिए सूचना

हिन्दी और अंग्रेजी भाषाओं में दादावाणी पत्रिका हर महिने 15वी तारीख को पोस्ट की जाती है। जिन महात्माओं को 'दादावाणी' पत्रिका विलंब से या तो अनियमित रूप से मिलती है, वे पूर्व प्राप्त पत्रिका के कवर पर अपना नाम, पता, पीनकोड आदि जाँच कर लें। यदि उसमें कोई भूल हो तो आपका ग्राहक नं, पूरा नाम-पता, पीनकोड के साथ लिखकर मोबाईल नं. 8155007500 पर SMS करें। आप अडालज त्रिमंदिर के पते पर पत्र से या dadavani@dadabhagwan.org इ-मेइल आइडी पर इ-मेइल से भी सूचित कर सकते हैं। जिससे आपकी यहाँ दर्ज की गई जानकारी में सुधार किया जा सके। यदि आपको दादावाणी का अंक न मिले तो उपर दिए गए कोई भी माध्यम से हमें सूचित करें। यदि अंक स्टोक में होगा तो आपको फिर से भेजा जाएगा।

दादाई जगकल्याण मिशन - सत्संग हाइलाईट्स

13 से 15 अक्तूबर - सैफ्रोनी (मेहसाणा) में अविवाहित युवाओं के लिए 3 दिन के ब्रह्मचर्य शिविर का आयोजन किया गया। जिसमें 430 युवकों ने हिस्सा लिया। शिविर में पूज्यश्री द्वारा ब्रह्मचर्य (पू.) पुस्तक पर पारायण के अलावा 'ढीले(लपटे पड़े) हुए दोषों से मुक्ति' टॉपिक पर विशेष सत्संग और MBA भाइयों द्वारा सुंदर नाटक किया गया। इसके अलावा शिविरार्थियों को पूज्यश्री के साथ डिनर, मॉर्निंग वॉक, गरबा और चरणस्पर्श का भी लाभ प्राप्त हुआ।

17 से 19 अक्तूबर- सैफ्रोनी (मेहसाणा) में अविवाहित बहनों के लिए 3 दिन ब्रह्मचर्य शिविर आयोजित किया गया, जिसमें 445 बहनों ने हिस्सा लिया। शिविर में ब्रह्मचर्य और कषाय से संबंधित विशेष सत्संग, पारायण और प्रश्नोत्तरी सत्संग तथा वी.सी.डी. सत्संग हुआ। इसके अलावा स्पेशल 'शक्ति स्वरूप' थीम पर वेलकम सेशन और पूज्यश्री के साथ गरबा, डिनर, दर्शन व इन्फॉरमल सेशन भी था।

10 से 18 अक्तूबर- नवरात्री उत्सव के दौरान पूज्यश्री ने दादा नगर हॉल में 10 और 12 तारीख को गरबा में पधार कर दर्शन दिए। और अंबा माँ की आरती की। 17 तारीख को दादाई गरबा-3 की सीडी के गायक कलाकारों ने आरकेस्ट्रा टीम के साथ लाइव पर्फोर्मन्स करके ज़ोर शोर से गरबे की धूम मचाई।

21 अक्तूबर से 5 नवम्बर - सोनेरी प्रभात में सीमंधर सिटी और ATPL में रहने वाले महात्माओं के लिए ब्लॉक वाइस प्रश्नोत्तरी रखी गई। पूज्यश्री ने अहंकार के स्वरूप जैसे कि 'मैं सच्चा हूँ, मैं अच्छा हूँ, विशेष हूँ, कुछ जानता हूँ,' का विशेष विवरण किया। पूज्यश्री के कर कमलों द्वारा दादा चित्रकथा भाग-6, टेल ऑफ ओरींग पैक-3, वॉटर बोतल, कैप, कप, टी-शर्ट, बैग पैक वगैरह सोविनियर का उद्घाटन हुआ।

7 से 9 नवम्बर - दिवाली की रात अडालज त्रिमंदिर पोडियम में विशेष भक्ति कार्यक्रम आयोजित किया गया। हर साल की तरह त्रिमंदिर, पूज्य नीरू माँ की समाधि और वात्सल्य रंगबिरंगी लाइट की रोशनी जगमगा गए। नए साल के दिन पूज्यश्री ने मंदिर में पधार कर सभी भगवंतो के दर्शन किए। श्री कृष्ण भगवान के समक्ष व श्री सीमंधर स्वामी के सभागृह में भी अन्नकूट सजाया गया। पूज्यश्री ने दादा व नीरू माँ को अन्नकूट का प्रसाद अर्पण किया और उसके बाद महात्माओं को चॉकलेट व ड्रायफ्रूट का प्रसाद दिया। नए साल के संदेश के बाद दादा नगर हॉल में दो दिन दर्शन चलता रहा। 11000 महात्माओं ने लाभ लिया। दर्शन के दौरान महात्माओं ने विधि, असीम जय-जयकार व भक्ति पद में उपयोग रखा।

अडालज संकुल अपडेट - 1) 28 अक्तूबर के दिन सीमंधर सिटी स्थित नई मेडिकल सुविधाओं के साथ रिनोवेट किए गए अंबा हेल्थ सेन्टर का पूज्यश्री के कर कमलों द्वारा उद्घाटन हुआ। जिसमें महात्माओं के अलावा नामी डॉक्टर भी उपस्थित थे। पूज्यश्री ने हॉस्पिटल का दौरा किया आशीर्वचन कहे।

2) 5 नवम्बर धनतेरस के दिन पूज्यश्री ने उणोदरी भवन के रिनोवेट किए गए भोजन खंड का उद्घाटन किया।

3) बिज़नेस पार्क में पूज्यश्री द्वारा 9 नवम्बर को स्टॉप एन्ड स्टे जैसा लेकिन आधुनिक सुविधा वाले अंबा स्यूट्स का उद्घाटन किया गया। अंबा स्यूट्स में सभी तरह की सुविधा युक्त कुल 64 कमरे हैं।

आत्मज्ञानी पूज्य दीपकभाई के सानिध्य में आगामी सत्संग कार्यक्रम

अडालज त्रिमंदिर

23 से 30 दिसम्बर - पारायण - आप्तवाणी 13 (उ.) (पेज. नं 388)से, **आप्तवाणी 14 - भाग-1** पर
सुबह 10 से 12-30, शाम 4-30 से 7-30 - **सत्संग-सामायिक**

2 जनवरी (रवि), **परम पूज्य दादाश्री की पुण्यतिथि पर विशेष कार्यक्रम**
शाम 4-30 से 6-30, **किर्तन भक्ति** तथा रात 8-30 से 10 - **महात्माओं के दादाजी के साथ अनुभव**

19 मार्च (मंगल), **पूज्य नीरुमा की 13वी पुण्यतिथि पर विशेष कार्यक्रम**

20 मार्च (बुध) शाम 4 से 7 - **सत्संग** तथा **21 मार्च** (गुरु) सुबह 10 से 12 - **आप्तपुत्र सत्संग**

21 मार्च (गुरु) शाम 4 से 7-30 - **ज्ञानविधि**

मुंबई

9 फरवरी (शनि) शाम 6 से 9 - **सत्संग**

10 फरवरी (रवि) शाम 5-30 से 9 - **ज्ञानविधि**

स्थल : निर्मल लाईफ स्टाईल मोल, LBS मार्ग, मुलुंड (वेस्ट). **संपर्क :** 9323528901

राजकोट

16 फरवरी (शनि) शाम 7 से 10 - **सत्संग**

17 फरवरी (रवि) शाम 5-30 से 9 - **ज्ञानविधि**

स्थल : वीनुभाई परसाणा की वाडी, आहीर चौक के पास, बोलबाला, 80 फीट रींग रोड. **संपर्क :** 9879137971

जामनगर

22 फरवरी (शुक्र) शाम 6 से 9 - **सत्संग**

23 फरवरी (शनि) शाम 5-30 से 9 - **ज्ञानविधि**

स्थल : व्रजभूमि-1 के सामने, TGES स्कूल के पास, माणेकनगर, राजकोट रोड. **संपर्क :** 9924343687

जामनगर त्रिमंदिर का प्राणप्रतिष्ठा महोत्सव

दि. 24 फरवरी 2019 (रविवार)

प्राणप्रतिष्ठा : सुबह 9-30 से 1 तथा **प्रक्षाल-पूजन-दर्शन-आरती :** शाम 4-30 से 7-30

स्थल : व्रजभूमि-1 के सामने, TGES स्कूल के पास, माणेकनगर, राजकोट रोड, जामनगर. **संपर्क :** 9924343687

विशेष सूचना : प्राणप्रतिष्ठा कार्यक्रम केवल एक दिन का है, इसलिए रात्रि आवास की सुविधा उपलब्ध नहीं हो पाएगी।
जो महात्मा-मुमुक्षु उसी दिन सीधे ही महोत्सव स्थल पर पहुँचेंगे, उनके लिए बाथरूम-टोइलेट की सुविधा स्थल पर रहेगी।

त्रिमंदिरो के संपर्क : अडालज : (079) 39830100, **राजकोट :** 9924343478, **भूज :** 9924345588, **गोधरा :** 9723707738, **अंजार :** 9924346622, **मोरबी :** (02822)297097, **सुरेन्द्रनगर :** 9737048322, **अमरेली :** 9924344460, **वडोदरा:** 9574001557
अन्य सेन्टरों के संपर्क : अहमदाबाद: (079) 27540408, **मुंबई:** 9323528901, **वडोदरा (दादा मंदिर) :** 9924343335, **दिल्ली:** 9810098564, **बैंगलूर:** 9590979099, **कोलकता:** 9830080820
यु.एस.ए.-केनेडा: +1 877-505-DADA (3232), **यु.के.:** +44 330-111-DADA (3232), **ऑस्ट्रेलिया:** +61 421127947

दिसम्बर 2018
वर्ष-14 अंक-2
अखंड क्रमांक - 158

दादावाणी

Date Of Publication On 15th Of Every Month
RNI No. GUJHIN/2005/17258
Reg. No. GAMC - 1500/2018-2020
Valid up to 31-12-2020
LPWP Licence No. PMG/HQ/36/2018-2020
Valid up to 31-12-2020
Posted at AHD. P.S.O. Sorting Office Set - 1
on 15th of each month.

सेवा से प्राप्त होता है उत्तम फल

सेवा की भूख नहीं रहनी चाहिए। जो भी सेवा प्राप्त हुई, वही हमारी सेवा। इच्छा हुई तो फिर वह अग्नि है। भावना रखना कि यह सेवा मुझे प्राप्त हो। प्राप्त हुई तो भी ठीक और नहीं हुई तो भी ठीक है। इच्छा हुई कि भीतर में सुलगा फिर जब तक वह इच्छा पूरी नहीं हो जाती तब तक त्रिविध ताप सुलगता रहता है। इस ताप से इन प्राप्त सुखों को खो देता है। यहाँ पर जो सेवा करते हैं न, उस सेवा का भौतिक फल नहीं मिलता। आध्यात्मिक फल मिलता है, इतना ऊंचा फल मिलता है कि वह खुद जो कि सेवक होता है वह सेव्य बन जाता है। इस दुनिया में जितने भी लोग सेव्य बने हैं, वे सेवक पद में से ही सेव्य बने हैं। यदि आप सेवक होकर सेवा करोगे तो सेव्य बन पाओगे।

- दादाश्री

Printed and Published by Dimple Mehta on behalf of Mahavideh Foundation - Owner. Printed at Amba Offset, B - 99, GIDC, Sector - 25, Gandhinagar - 382025.